चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत

गुजर गया जमाना !

प्रेषक

NOURISHING
NOURISHING

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना

*

१. ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न हो, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकता।

२. पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते के साथ सूचना देनी चाहिए।

३. प्रति नहीं पाई, तो १०-वीं के पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद को आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

—व्यवस्थापक, 'चन्दामामा'

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल
अनुपम गन्ध
एवं केश शोभा
केलिये

वीर-बच्चा
बच्चों की ताकत के लिये
अनुपम टानिक
VEERBACHHA
बिड़ला लेबोरेटरीज़, कलकत्ता ३०

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

हमारे देश में कई प्रान्त हैं। लगभग हर प्रान्त की अपनी अपनी भाषा है। तभी कोई वस्तु आसानी से ग्राह्य हो सकती है, यदि हर प्रान्तवाले को उसकी अपनी भाषा में समझायी जाये। "चन्दामामा" यही करना चाहता है।

आजकल "चन्दामामा" का प्रकाशन सात भाषाओं में होता है। हमें यह सूचित करते हर्ष हो रहा है कि इस वर्ष से "चन्दामामा" कुछ और भाषाओं में भी प्रकाशित किया जायेगा और इसमें नवीनतम शिक्षाप्रद कहानियाँ आसान शैली में दी जायेंगी।

अगर पाठकों का सहयोग मिलता रहा, तो "चन्दामामा" का आलोक-क्षेत्र भी निरन्तर बढ़ता जायेगा।

वर्ष : 6 मार्च 1955 अङ्क : 7

पक्षी का शोर !

रामपरम था नाम नगर का
भीमराज रहता था एक;
दस सौ हाथी-सा बलशाली
था वह लाखों में से एक!

निकल पड़ा वह एक दिवस को
सैन्य-सेवकों को ले साथ;
निश्चय था यह सौ शेरों को
पकड़ेगा वह हाथों-हाथ।

तोता एक कहीं से बोला—
'पकड़ मुझे ही शक्ति अगर हो!'

फिरसे उसने कहा सुनाकर
भीमराज जब रुका नहीं तो।

"मुझको भी तो पकड़ न पाया
भीमराज को बल भी क्या है!
लेकिन सौ शेरों को ज़िन्दा
पकड़ूंगा, यह हाँक रहा है।"

इतना कहकर बहुत ज़ोर से
हँसने तोता लगा वहाँ पर
और लोग भी लगे विहँसने
सुनते सब जो रहे वहाँ पर।

भीमराज गुस्से में आया,
मुट्ठी कस वह आगे धाया,

* * *

बिन मारे ही छोड़ दिया तब
तोते को उस भीम बली ने।

फिर तो तोता उड़ा गगन में
लगा उछलने हँसते-हँसते;
"हार गया राजा ही मुझसे!"
यही पुनः यह रटते-रटते।

भीमराज बलशाली ने तब
समझी अपनी नादानी भी;
हँसा शरारत तोते की लख,
दूर हुई सब हैरानी भी!

खोज-खाज कर वृक्ष झाड़ियाँ
तोते को झट पकड़ा कसकर;
कहा—"बोल, तोते तू अब तो
गर्व बहुत तुझको है क्योंकर?"

सुनकर तोता हँसा उसी क्षण
और कहा लोगों से उसने—
"यह राजा कैसा बलशाली
देखा और सुना भी सब ने।

भीमराज ऐसा है यह जो
पक्षी पर है बल दिखलाता;
मार रहा मुझको है लेकिन
बातें सौ शेरों की करता!"

तोते की ये बातें सुनकर
लगे लोग सब छी-छी करने;

मुख - चित्र

कुछ समय बाद, दुर्योधन के बुलाने पर पंच-पाँडव फिर हस्तिनापुर वापिस आये। बहुत दिन हो गये थे, इसलिये गान्धारी और द्रौपदी आपस में मिल-जुलकर बातें कर रही थीं। तभी प्रातिकामि नाम के व्यक्ति ने आकर द्रौपदी को बुलाया—"युधिष्ठिर तुम्हें जुए में हार गया है। दुर्योधन तुम्हें बुला रहा है। आओ जल्दी।"

तब द्रौपदी ने आश्चर्य से पूछा—"धर्मराज क्या अपने आप हारने से पहिले मुझे हार गये थे, या हारने के बाद?" उसने कोई जवाब न दिया, और द्रौपदी को सभा में आने के लिये बाधित करने लगा। भरी सभा में द्रौपदी जाकर एक तरफ़ खड़ी हो गई। दुर्योधन ने उसको बीचों-बीच खींच लाने के लिये आज्ञा दी। उसकी आज्ञा के अनुसार, दुश्शासन उसको पकड़कर सभा के मध्य में ले आया।

उस सभा में सब चकित होकर देख रहे थे। पर किसी की हिम्मत न हुई कि चूँ करें। दुष्ट दुर्योधिन सिर्फ़ इतने से ही सन्तुष्ट न हुआ। "देख क्या रहे हो?"—दुर्योधन ने दुश्शासन को इशारा किया। उसका इशारा पाते ही, दुश्शासन द्रौपदी के वस्त्र खींचने लगा।

उस समय द्रौपदी की कोई रक्षा कर नहीं पाया। यहाँ तक कि भीष्म भी कुछ नहीं कर सके। सब के सब भौंचक्के हो बैठे रहे।

तब द्रौपदी की वेदना की हद न रही। अपनी मान-रक्षा के लिये, स्तब्ध हो, स्वच्छ मन से कृष्ण भगवान की लाख लाख प्रार्थना करने लगी।

पतिव्रता द्रौपदी की प्रार्थना कृष्ण भगवान ने सुनी। उसकी रक्षा करने के लिये कृष्ण तुरंत सिद्ध हो गये। उसके फलस्वरूप—दुश्शासन द्रौपदी की साड़ी खींचता जाता, पर साड़ी कहीं खतम न होती—द्रौपदी के शरीर पर से कपड़ा न उतरा। दुर्योधन की चाल न चल सकी।

द्रौपदी के चरित्र की इस तरह रक्षा करनेवाले कृष्ण भगवान की महिमा से सब लोग चकित रह गये।

पद्मावती का विवाह

वत्स देश के राजा उदयन ने अपने मन्त्री यौगन्धराय की सहायता से उज्जयिनी की राजकुमारी वासवदत्ता से विवाह कर लिया। वासवदत्ता बहुत ही सुन्दर थी। उदयन को राज्य-कार्य में दिलचस्पी न थी। उसको पहिले से ही संगीत और शिकार का व्यसन था। और अब वासवदत्ता ने उसका मन पूरी तरह आकर्षित कर लिया था। राजा ने सारा राज्य-भार यौगन्धराय और सेनापति रुमण्वन्त पर छोड़ दिया और स्वयं वासवदत्ता के साथ शिकार, और अनेक भोग-विलासों में मस्त रहने लगा।

उदयन के पुरखे पांडव थे। कभी चन्द्रवंश के राजा हस्तिनापुर को अपनी राजधानी बना सारे भारत में राज्य करते थे। परन्तु उदयन के समय के आते आते साम्राज्य सब समाप्त हो चुका था। केवल वत्स देश मात्र ही रह गया था। यौगन्धराय को डर था, यदि राजा को भोग-विलास के जीवन से विरक्त न किया गया, तो बचा-खुचा राज्य भी खतम हो जायेगा। उसने एक दिन रुमण्वन्त को बुलाकर उसके सामने अपना भय व्यक्त किया।

यौगन्धराय ने उससे पहिले ही एक चाल सोच रखी थी। उदयन के शत्रुओं में मगध राज्य का प्रद्योत भी था। मगधराज्य वत्स राज्य से सटा ही था। अगर प्रद्योत को साथ मिला लिया गया तो उदयन के साम्राज्य के विस्तृत होने की गुन्जाइश थी। प्रद्योत के एक लड़की थी, जिसका नाम पद्मावती था। वह बहुत ही सुन्दर और सुगुणवती थी। यौगन्धराय ने सोचा, यदि जैसे तैसे उसका विवाह उदयन से कर दिया गया, तो उसकी चाल चल सकती थी।

कुमारी आशा बोहरी

यौगन्धराय ने मगध के राजा के पास खबर भिजवाई कि वे अपनी राजकुमारी का उदयन से विवाह करें। मगध राजा ने न माना। "मैं उस व्यक्ति को अपनी लड़की विवाह में कैसे दे सकता हूँ, जिसको सिवाय वासवदत्ता के, किसी और की फ़िक्र ही नहीं है?"—मगध के राजा ने पूछा। जबतक वासवदत्ता उसके साथ है, उदयन किसी और के साथ शादी नहीं करेगा। अगर उसका साम्राज्य बढ़ाना है, तो यह ज़रूरी है कि उसका मन वासवदत्ता पर से हटाया जाय।

उसके लिये भी यौगन्धराय ने एक उपाय सोचा। जब राजा दूर कहीं गया हो, उसके सामने यह साबित किया जाय कि वासवदत्ता की मृत्यु हो गई है और मौका पा उसको पद्मावती से शादी करने के लिये मनाया जाय। जबतक विवाह नहीं होता है, तबतक वासवदत्ता को कहीं छुपाया जा सकता है।

रुमण्वन्त ने यह उपाय सुना तो वह अचरज में पड़ गया।

"अगर वासवदत्ता मर गई तो हो सकता है कि उदयन पागल ही हो जाय। वह शोक में मर भी सकता है। फिर इस उपाय के लिये वासवदत्ता की स्वीकृति भी आवश्यक है। अच्छा होगा, अगर उसके बड़े भाई गोपालक से भी सारी बात सच सच कह दी जाय!"—रुमण्वन्त ने सलाह दी।

यौगन्धराय ने वचन दिया कि वह किसी का भी बाल बाँका न होने देगा। वह अपने काम पर लग गया। उसने गोपालक को बुलवाया; उससे बातचीत कर उसको अपनी तरफ़ कर लिया। अगले दिन यौगन्धराय ने राजा उदयन के पास जाकर कहा—"महाराज! हम लावाणक चलें। वह हमारे राज्य की सीमा पर है। बहुत ही

अच्छी जगह है। वह शिकार के लिये भी बड़ा उपयोगी प्रदेश है। यही नहीं, वहाँ के लोगों को मगध का राजा तंग कर रहा है। उनकी पूछताछ करना हमारा कर्तव्य है।"

उदयन, वासवदत्ता, गोपालक, नौकर-चाकरों के साथ लावाणक के लिये रवाना हुआ। यौगन्धराय, वसन्तक भी साथ गये। जब से उदयन वहाँ पहुँचा, तब से वह शिकार में मस्त रहने लगा।

एक दिन जब उदयन शिकार खेलता खेलता बहुत दूर चला गया, तब यौगन्धराय ने वासवदत्ता के पास जा अपनी चाल के बारे में कहा। वासवदत्ता को यह बहुत मुश्किल लगा कि वह ऐसा अभिनय करे, मानों वह मर गई हो। वह पति-वियोग भी न सहना चाहती थी। परन्तु चूँकि यौगन्धराय को वह अपना गुरु मानती थी, और उसके पति को नया साम्राज्य मिलता था, इसलिये उसने यौगन्धराय की बात मान ली।

यौगन्धराय ने वासवदत्ता से ब्राह्मणी का वेष पहिनने के लिये कहा। वसन्तक को काना ब्रह्मचारी बनाया। स्वयं उसने एक बूढ़े ब्राह्मण का वेष धरा। तब तीनों ने सीमा पारकर मगध राज्य की ओर चल

दिया। उनके जाते ही रुमण्वन्त ने उस घर में आग लगा दी, जहाँ वासवदत्ता रहा करती थी। जब तक पाँच-दस आदमी इकट्ठे हुये तो घर राख हो चुका था। तब रुमण्वन्त ने दुःख के साथ कहा कि वासवदत्ता देवी और वसन्तक घर में जल गये हैं। सब रोने-धोने लगे। जब शिकार खेलकर उदयन वापिस आया, तो यह खबर सुनते ही वह मूर्छित हो गया। पर जब उसने वासवदत्ता के भाई गोपालक को मृत्यु-वार्ता सुन अधिक दुःखी न पाया, तो वह भी अपने दुःख को छुपाने लगा।

इस बीच में वेष बदलकर यौगन्धराय, वासवदत्ता, वसन्तक, राजमहल के बगीचे में जाकर वहाँ राजकुमारी पद्मावती से मिले।

उससे यौगन्धराय ने यों कहा —

"माँ जी! यह मेरी लड़की अवन्तिका है। इसका पति बुरी आदतों में पड़ इसको छोड़कर कहीं चला गया है। मैं उसको खोजने जा रहा हूँ। जबतक मैं वापिस न आ जाऊँ, तबतक मेहरबानी करके मेरी लड़की को अपने आश्रय में रखकर पुण्य कमाइये। मेरा लड़का भी उसके साथ रहेगा।"

वासवदत्ता दुःख के मारे विह्वल थी। उसके सौन्दर्य को देखते ही पद्मावती का हृदय पिघल गया।

वासवदत्ता को आश्रय देने के लिये पद्मावती ने मान लिया। अपना काम कर यौगन्धराय चला गया।

वासवदत्ता वसन्तक को लेकर पद्मावती के साथ अन्तःपुर में गई। उसका मन पति के वियोग में जलने लगा। परन्तु जब उसने सीता का चित्र अन्तःपुर में देखा, तो उसने अपने को यह कहकर आश्वासन दिया कि उस महा माता के वियोग के सामने उसका भी कोई वियोग है!

कुछ दिनों बाद यौगन्धराय ने मगध के राजा के पास खबर भिजवाई—

"जब से लावाणक में वासवदत्ता की मृत्यु हुई है, तब से हमारा राजा शोक-सागर में डूबा हुआ है। उसका शोक दूर करने के लिये आप अपनी लड़की पद्मावती का उनके साथ विवाह करवाइये।"

इस बार मगध के राजा ने यौगन्धराय के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। उसको गर्व भी हुआ कि उदयन उसका दामाद होने जा रहा है। एक सप्ताह के भीतर

विवाह के लिये शुभ मुहूर्त भी निश्चित कर दिया। यह बात सुनते ही पद्मावती के सन्तोष की सीमा न थी, न वासवदत्ता के दुःख की ही।

वसन्तक ने वासवदत्ता को दिलासा दिलाया—"देवी! शोक मत करो! इस विवाह से एक शत्रु मित्र बन जायेगा। और अगर महाराज के बारे में पूछती हो तो उनका प्रेम तुम्हारे लिये न कभी कम होगा, न बदलेगा ही।"

ठीक मुहूर्त के समय उदयन का बड़े धूमधाम से विवाह हुआ। जब अग्नि के सामने उदयन और पद्मावती का विवाह हो रहा था, तब यौगन्धराय ने मगध राजा से अग्नि की साक्षी में शपथ करवाई कि वह वत्सदेश से हमेशा मैत्री रखेगा। राजमहल जगमगा रहा था। खुशियाँ मनाई जा रही थीं। परन्तु वासवदत्ता किसी कोने में छुप विवाह के यथाविधि होने में विघ्न न डाल रही थी।

विवाह होते ही उदयन अपनी नई पत्नी के साथ लावाणक वापिस आ गया। पद्मावती के नौकर-चाकरों के साथ वासवदत्ता भी पीछे पीछे चली आई।

वत्सदेश के राजा उदयन ने पद्मावती से विवाह तो कर लिया था, पर वह एक क्षण भी वासवदत्ता को न भूल पाया था। पति की मनःस्थिति का अनुमान कर वासवदत्ता ने पद्मावती को उसी तरह सजाया; उसी तरह टीका लगाया, जिस प्रकार वह स्वयं लगाती थी। उसको पति के पास भेजकर वह गोपलक के पास गई। भाई-बहिन एक दूसरे को आलिंगन कर रोये। उस समय यौगन्धराय, रुमण्वन्त आदि, जो भी आया, उसकी आँखों से आँसू बहने लगे, और इधर अपनी नई पत्नी के फूल, टीका वगैरह देखकर राजा आश्चर्य में पड़ गया।

"तेरा श्रृंगार किसने किया है?"—उदयन ने पूछा।

पद्मावती ने आश्चर्य के साथ जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया—

"एक बूढ़ा ब्राह्मण अवन्तिका नाम की लड़की को मेरी शरण में लाया था। वह बहुत ही अच्छी और चतुर है। उसी ने आज स्वयं मेरा श्रृंगार किया है।"

"वह कहाँ है?"—राजा ने पूछा।

पद्मावती ने जब अपनी सहेलियों को भेजकर उसको बुलवाया, तब उन्होंने कहा—"वह यहाँ नहीं हैं। गोपालक महाराज के घर गई हुई है।"

"वहाँ क्यों गई है? जाओ, उससे जल्दी जाकर कहो कि मैंने बुलाया है"—पद्मावती ने आज्ञा दी।

जब राजा ने यह सुना कि अवन्तिका गोपालक के घर गई हुई है, तो उसका सन्देह और बढ़ गया। उसने गोपालक के घर स्वयं जा वासवदत्ता को देखा। उसके आनन्द की सीमा न थी।

यौगन्धराय ने राजा से क्षमा माँगते हुये कहा—"महाराज! यह सब मेरी ही करनी है। आपका राज्य विस्तृत करने के लिये और मगध के राजा के साथ मैत्री करवाने के लिये ही मैंने यह विवाह करवाया था।"

"वैसा मत कहिये। जब मैंने राज्य-भार छोड़ दिया था, तब आपने राज्य को देखा-भाला। उसको नाश से बचाया, उस कार्य के लिये मैं आपका कृतज्ञ हूँ।"—वत्सदेश के राजा ने कहा।

वासवदत्ता के मिलने पर वत्स के राजा उदयन को पद्मावती की उदारता भी समझ में आई। वह दोनों पत्नियों को समान रूप से प्रेम करता, सुख से रहने लगा।

एक बार एक व्यापारी, दूर देश में व्यापार के लिये जाता जाता साँझ के समय एक गाँव में पहुँचा। उसने उस गाँव में रात बितानी चाही। जब वह घोड़े पर गाँव की ओर जा रहा था तो एक आदमी ने सामने आकर कहा—"बाबू जी! चार आने दिलवाइये। मुझे अफ़ीम की आदत है। दो दिन से मेरे पास एक पैसा भी नहीं है।" उसे चार आने दे व्यापारी गाँव में घुसा।

एक घर के सामने वह घोड़े से उतरा, और घर के मालिक के पास जा, वहाँ रात बिताने की अनुमति माँगी। घर के मालिक ने इज़ाज़त दे दी।

व्यापारी ने घर के आँगन में गड़ी लकड़ी की खूँटी से अपना घोड़ा बाँध दिया, और रात भर वहाँ रहा। जब सबेरे उठ व्यापारी ने आगे जाना चाहा, तब उसने देखा कि उसका घोड़ा खोलकर घर का मालिक आगे आगे कहीं जा रहा था।

"बाबू! मैं अब जानेवाला हूँ। मेहरबानी करके मेरा घोड़ा कहीं न ले जाइये।"—व्यापारी ने ज़ोर से कहा।

तब घर के मालिक ने अचम्भे में कहा—"यह घोड़ा मेरा है। मेरे आँगन में गड़ी लकड़ी की खूँटी रोज़ एक घोड़े को जन्म देती है।"

"बाबू! आप मेरा घोड़ा चुराने के लिये चाल चल रहे हैं। यह अच्छा नहीं है।"—व्यापारी ने कहा।

"अगर तुझे मेरी बात पर यकीन न हो तो इस गाँव में चाहे तू किसी से पूछ ले। सबको मालूम है कि रोज़ हमारे घर की खूँटी एक घोड़े को जन्म देती है।"—घर के मालिक ने कहा।

सुबोध कुमार

वह आदमी पक्का चोर था। उस गाँव में बहुत से उसके जैसे ही थे। अगर कभी भूला-भटका कोई परदेशी आता तो सब मिलकर उसे ठगा करते। इसलिये सब ने घर के मालिक की बात में बात मिलायी।

व्यापारी और कुछ कर नहीं सकता था। लाचार हो उसने गाँव के पटवारी से घर के मालिक के बारे में शिकायत की। पटवारी ने घर के मालिक को बुलाकर पूछताछ की।

"जी हुज़ूर! हमारे घर में लकड़ी की खूँटी रोज एक घोड़े को जन्म देती है। अगर ज़रूरत हो तो दसियों से गवाही दिल्वा दूँ।"—घर के मालिक ने कहा।

"क्यों भाई! क्या तेरे पास कोई गवाह है, जो यह कहे कि यह घोड़ा तेरा ही है। अगर हो तो बुला ला।"—पटवारी ने व्यापारी से कहा।

व्यापारी को उस आदमी की याद आयी, जिसने उससे अफ़ीम के लिये चार आने पिछली साँझ को माँगे थे। वह उसकी खोज में निकल पड़ा। इस बीच में घर का मालिक भी अपने गवाह इकट्ठे करने लगा।

वह आदमी, जिसने व्यापारी से चार आने लिये थे, अफ़ीम के नशे में था।
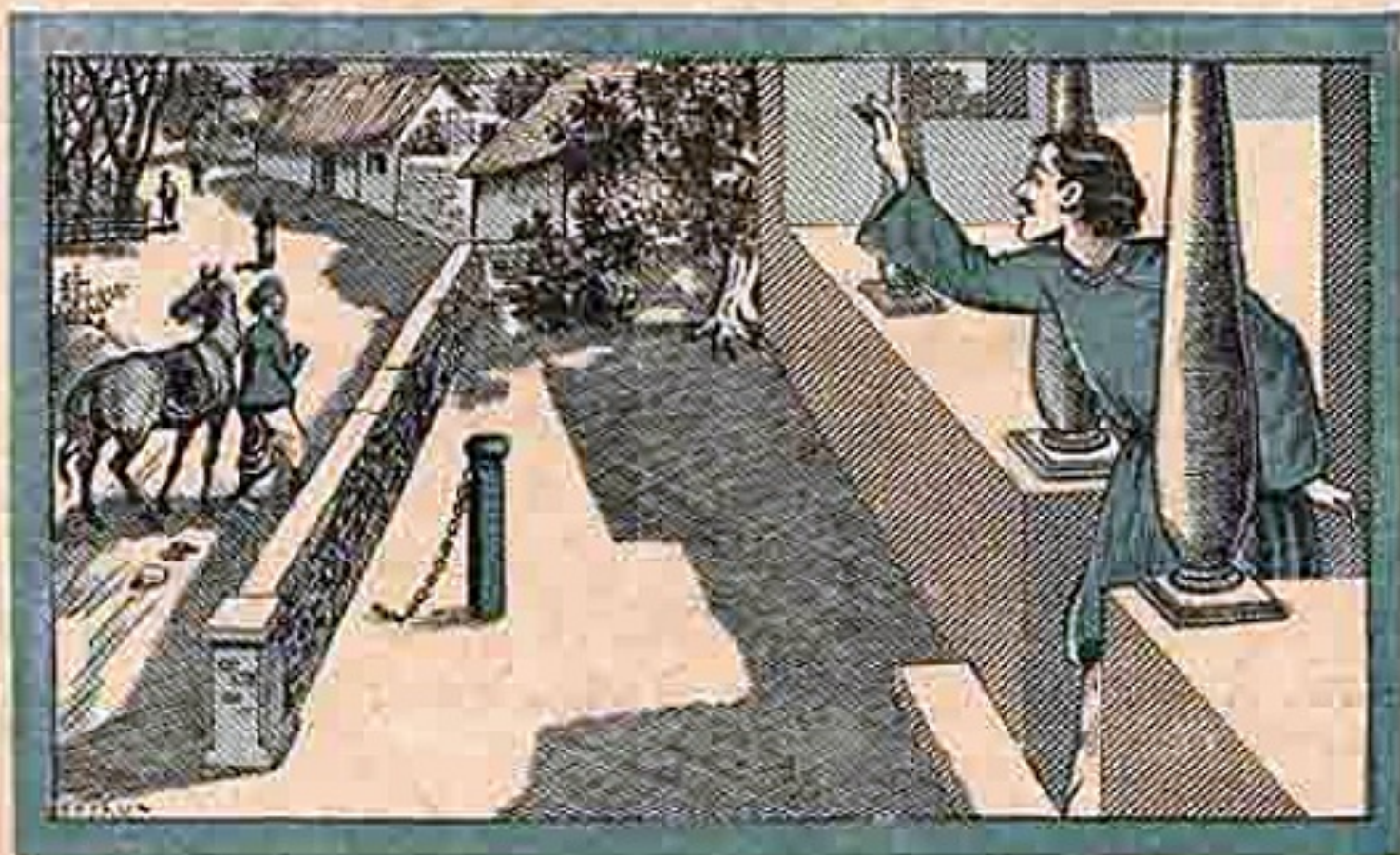
उसने उसको मुश्किल से उठाया और उससे जो उस पर गुज़री थी, कह सुनाई। यह सुनते ही अफ़ीमची व्यापारी के साथ पटवारी के पास आया।

तब घर का मालिक एक एक करके अपने गवाहों से पटवारी के सामने यह साक्षी दिला रहा था कि रोज़ उसके घर की खूँटी एक एक घोड़े को जन्म देती थी। अफ़ीमची को देखते ही घर के मालिक के एक गवाह ने ठट्ठा मारकर कहा—"ढूँढ़-ढाँढ़कर इस अफ़ीमची को ही गवाह बनाकर लाये हो! इसकी बात पर कौन विश्वास करेगा?" व्यापारी को देखकर उसका वे परिहास करने लगे।

नशा अभी गया न था। अंगड़ाइयाँ लेते हुये अफ़ीमची को देखकर पटवारी ने कहा—"तू तो अच्छे नशे में नज़र आता है। तब भला तेरी साक्षी कैसे ली जाय!"

तब अफ़ीमची ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा—"महाराज! मैं नशे में नहीं हूँ। रात भर तालाब के नीचे आग जला मछलियों को पका रहा था। एक पल भी न सो सका।"

इस बात पर सब के साथ पटवारी भी हँसा। "तेरी गवाही ऊटपटाँग है, यह तो तेरी बातें ही साबित कर रही हैं। तालाब के नीचे भला कोई आग जलाता है!"—पटवारी ने हँसकर पूछा।

"आप यह क्या कह रहे हैं? जब लकड़ी की खूँटी का घोड़े का जन्म देना संभव है, तो क्या तालाब के नीचे आग जलाना असंभव है? क्या मेरी ऊटपटाँग गवाही है?"—अफ़ीमची ने पूछा।

यह बात सुन पटवारी को शर्म आयी। उसने घर के मालिक को डराया-धमकाया, और व्यापारी का घोड़ा व्यापारी को वापिस दिलवा दिया।

कौवे क्यों चिल्लाते हैं?

राजा भोज साहित्य-प्रेमी था। वह पंडितों और कवियों का विशेषरूप से सम्मान किया करता था। अगर उसे कोई उसके मन-पसन्द की कविता सुनाता तो एक एक अक्षर के लिये लाख लाख रुपये दिया करता। इसलिये उसके राज्य में लगभग सभी कवि थे। यहाँ तक कि बच्चे भी पंडित थे।

अनादिकाल से काशी के पंडित सारे देश में प्रसिद्ध थे। परन्तु राजा भोज के समय धारानगर के पंडितों की प्रसिद्धि उनसे अधिक हो गई। ज्यों ज्यों दिन गुज़रते गये, त्यों त्यों काशी पंडितों को कोई पूछनेवाला भी न रहा।

यह देख काशी के पंडितों को बहुत गुस्सा आया। उन्होंने एक सभा बुलायी और निश्चय किया कि जब तक काशी के पंडित धारानगर के पंडितों को वाद-विवाद में नहीं जीत लेंगे, तब तक काशी नगर की प्रतिष्ठा न रह सकेगी। इस काम के लिये उन्होंने चार दिग्गज पंडितों को चुनकर धारानगर भेजा।

चारों काशी के पंडित धारानगर पहुँचकर एक मामूली गृहस्थी के घर ठहरे। उस गृहस्थी ने उनका स्वागत किया। गृहस्थी के एक बारह वर्ष की लड़की थी, और आठ वर्ष का लड़का था।

धारानगर में पंडितों का काफ़ी सम्मान-सत्कार होता था। परन्तु यहाँ के पंडित कितने बड़े हैं, और उनको कैसे हराया जाय, यह काशी के पंडितों को बोध न हो पाया। उनको डर लगा रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि वे ही हार जायें और काशी की बदनामी हो। जब अगले दिन सवेरे नित्य कृत्य से निवृत्त होकर पंडित बैठे हुये

डी. मंजुला

थे, तो एक विचित्र घटना घटी। पेड़ पर बैठे कौवे ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगे।

उनका चिल्लाना सुन घर के लड़के ने अपनी बहिन से पूछा—"बहिन! सवेरे सवेरे कौवे क्यों चिल्लाते हैं?" घड़ा ले वह पानी लाने जा रही थी। उसने जाते जाते कहा—"हमारे घर में काशी के चार पंडित हैं। उनके लिए यह एक छोटा-सा प्रश्न है। उनसे पूछना।"

लड़के ने पंडितों के पास आ विनयपूर्वक पूछा—"महाशयो! मेरा सन्देह पूरा कीजिये। सवेरे सवेरे कौवे क्यों चिल्लाते हैं?"

काशी के पंडित एक दूसरे का मुख ताकने लगे। सच कहा जाय तो वे यह न जानते थे कि कौवे क्यों सवेरे सवेरे चिल्लाते हैं। उनको कभी वैसा सन्देह हुआ ही न था। इसलिये वे यह भी न जानते थे कि उसका निवारण कैसे किया जाय।

लड़के से कुछ न कुछ तो कहना ही था। इसलिये जो उन्हें सूझा, उन्होंने कह दिया—

"सवेरे सवेरे कौवे उठ एक दूसरे को राम राम कहते हैं। आपस में बातचीत करते हैं।" एक पंडित ने कहा।

"वे तो दिन भर बातें करते रहते हैं,—पर सवेरे सवेरे वे एक साथ क्यों चिल्लाते हैं?"—लड़के ने पूछा।

"रात खतम हो गई है, इस खुशी में वे चिल्लाते हैं।"—एक और पंडित ने बताया।

"तो दिन भर क्यों नहीं चिल्लाते?"—लड़के ने फिर पूछा।

दूसरे पंडितों ने भी कुछ कहा। पर लड़के को सन्तोष न हुआ।

इस बीच में लड़के की बहिन पानी लेकर वहाँ आई।

"बहिन! कम से कम तू तो मेरा सन्देह पूरा करेगी न! सवेरे सवेरे क्यों कौवे शोर करते है?"—लड़के ने पूछा।

"काशी के पंडितों से पूछा कि नहीं?"—बहिन ने प्रश्न किया।

"लगता है, वे ठीक जवाब नहीं जानते हैं"—भाई ने कहा।

"तो सुन! मैं बताती हूँ। सूर्य भगवान, को अन्धकार का नाश करते हुये आते देख, कहीं ऐसा न हो कि उन्हें भी वह अन्धेरा समझ नाश कर दे, कौवे चिल्ला चिल्लाकर सूर्य भगवान से कहते हैं—"हम अन्धकार नहीं हैं, हम कौवे हैं!—कांय, कांय!"—यह कह बहिन घर में चली गई।

लड़का भी अपने सन्देह के निवारण पर खुशी से उछलने-कूदने लगा।

काशी के पंडित यह सब सुन आश्चर्य से एक दूसरे का मुख देखने लगे।

"मामूली घर के कुंवारी लड़की ही जब इतनी बुद्धिमान है, तब इस देश के पंडितों के सामने भला हम क्या चीज़ हैं!" वे आपस में बातचीत कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे। उसी समय वे काशी के लिये वापिस रवाना हो गये।

[१४]

समरसेन शिवदत्त के सैनिकों के साथ उसके गाँव की तरफ़ चला गया था न ? गाँव के पास पहुँचते ही व्याघ्रदत्त के सैनिकों ने गाँव को जला दिया था। तब शिवदत्त के सैनिकों ने उन्हें बताया कि उनका सरदार वहाँ से भाग गया था। उसको ढूँढता-ढूँढता समरसेन पहाड़ों के बीच में फँस गया था। बाद—

समरसेन एक बड़े पत्थर की आड़ में से पीछे की तरफ़ देखने लगा। उसके साथ के सैनिक भी हथेली में प्राण रख भय से काँप रहे थे। वे डर रहे थे, कहीं ऐसा न हो कि सुरंग में से हाथियों का एक बड़ा झुन्ड निकले और उनको चकनाचूर कर दे। वे एक तंग जगह में फँसे हुये थे। वहाँ से भाग निकलना भी आसान न था। भयभीत सैनिकों को और समरसेन को यकायक दो-तीन व्यक्तियों का आर्तनाद सुनाई दिया। वह आर्तनाद गुफ़ा की परली तरफ़ से आ रहा था। परन्तु जिस जगह वे खड़े थे, वहाँ से बाहर कैसे निकलें?

जब सब के सब इस उलझन से बाहर निकलने का तरतीब सोच रहे थे, वह हाथी चिंघाड़ता चिंघाड़ता इधर-उधर देखने लगा। फिर जिस गुफ़ा से समरसेन और उसके साथी आये थे, उसमें जा घुसा। थोड़ी देर

में उसके जल-प्रपात में से गुज़रने की ध्वनि भी सुनाई दी।

पहिले पहिले समरसेन अपनी जगह से बाहर निकला। उसके बाद सैनिक तुरंत उसके पीछे आये। रह रह कर गुफ़ा की परली तरफ़ से आर्तनाद अब भी बहुत साफ़ सुनाई दे रहा था।

'कोई बड़ी आफ़त में फँसा हुआ जान पड़ता है'—एक सैनिक ने कहा।

'इसमें तो कोई शक नहीं है। परन्तु हाथी यकायक क्यों उस तरफ़ से भागकर आया! कहीं यह दुश्मनों की चाल तो नहीं है! क्या यह सचमुच आर्तनाद है! नहीं तो....' समरसेन अभी कह ही रहा था कि गुफ़ा की परली तरफ़ से बड़ा शोर-शराबा होने लगा।

समरसेन ने सोचा कि अब हिचकिचाने से कोई फ़ायदा नहीं होगा। गुफ़ा के परली तरफ़वाले, चाहे दुश्मन हों, या दोस्त—खतरनाक हालत में हैं। इसलिये हिम्मत बाँधकर, आगे जाकर देखना उसने अपना फ़र्ज़ समझा।

समरसेन, सैनिकों को आता देखकर आगे बढ़ा। जब वे तंग गुफ़ा में थोड़ी दूर तक चले, तो उन्हें गुफ़ा का दरवाज़ा, और उससे सटा, बड़ा-सा तालाब दिखाई दिया। तालाब में कई पेड़ भी थे। पानी बहुत ही स्थिर था।

समरसेन ज्यों ही आगे गया तो उसने तीन आदमियों को घुटने भर पानी में, खम्भों से बँधा देखा। समरसेन को देखते ही वे और भी ज़ोर से चिल्लाने लगे।

न समरसेन, न सैनिक ही जान पाये कि आखिर मामला क्या था। बँधे हुवे आदमियों को तत्क्षण विमुक्त करने में उन्हें कोई खतरा न मालूम हुआ। न उनके

बगल में, न कहीं आस-पास ही कोई था। उन्हें देखकर क्यों वे इतने ज़ोर से चिल्ला रहे थे; समरसेन को यह सोच बहुत आश्चर्य हुआ।

बंधे हुये व्यक्तियों के पास आने के लिये पानी में उतरकर थोड़ी दूर जाना आवश्यक था। पानी गहरा नहीं है, यह वहाँ जमी हुई काई ही बता रही थी। समरसेन ने अपनी तल्वार और तरकश सम्भाले, और पानी में उतर गया। सैनिक भी उसके पीछे पीछे चलने लगे। उनके पानी में घुसते ही वे तीनों व्यक्ति बहुत बुरी तरह चिल्लाये।

समरसेन आश्चर्य से देख रहा था। सामने एक मगर मुख बाये उसकी तरफ़ बढ़ा आ रहा था। तब उसको मालूम हुआ कि मामला क्या था। उन व्यक्तियों के भयंकर चिल्लाने का कारण यह मगर ही था।

तल्वार म्यान में रख, समरसेन ने धनुष पर बाण चढ़ाया। मगर मुख खोल, दाँत दिखाते दिखाते आगे चला आ रहा था। उसे थोड़ी दूर आने दिया, फिर समरसेन ने उसके नथने का निशाना बना, बाण छोड़ा। बाण की चोट से मगर थोड़ी देर पानी में छटपटाया। फिर पहिले की तरह आगे

बढ़ने लगा। उसकी चमकती हुई आँखें डरावनी लगती थीं।

इस बार समरसेन ने अपनी तल्वार से उसकी रीढ़ पर दो जबरदस्त घाव किये। मगर घाव न सह सका और पानी में तड़प-तड़पकर मरने लगा। भयभीत सैनिकों के प्राणों में प्राण आये।

बाद में समरसेन खम्भों से बँधे हुये व्यक्तियों के पास गया। जब समरसेन ने शक्ल देखी तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। ये तीनों, उसको व्याघ्रदत्त के पकड़ने के पूर्व, उस गुफ़ा में थे। परन्तु चौथे आदमी का क्या हुआ? समरसेन को देखकर ये तीनों सैनिक भी आश्चर्य से स्तम्भित रह गये। उनके आनन्द की भी हद न थी। उनके प्राण तो बच ही रहे थे, साथ ही उनको अपना खोया हुआ सरदार भी मिल गया था।

'सरदार! हमने कभी कल्पना भी न की थी कि हम फिर आपको देख पायेंगे।'—एक सैनिक ने कहा।

'चौथे सैनिक का क्या हुआ?'—समरसेन ने पूछा।

'सरदार! आपने जिस मगर को मारा है, वह उसको जिन्दा निगल गया। अगर आप वक्त पर नहीं आते तो हमारी भी वही हालत हुई होती।"—सैनिकों ने बड़े विनय से जवाब दिया।

'तुमको किसने यों बाँध रखा है?'—समरसेन ने पूछा।

सैनिकों ने जो कुछ गुज़रा था, संक्षेप में कह सुनाया। वे भी अपने सरदार को खोजते हुये गुफ़ा के खुफ़िया दरवाज़े से इस इलाके में पहुँचे थे। वहाँ व्याघ्रदत्त के सिपाहियों ने उनको बाँध दिया, और अपने सरदार के हुक्म के अनुसार, उनको मगरों

का पेट भरने के लिये इस तालाब में छोड़ दिया गया।

'हमें यहाँ बाँधकर उनके गये अभी कोई अधिक देरी नहीं हुई है। अगर उन पेड़ों के बीच में जाँच-पड़ताल की गई, तो वे जिस रास्ते से गये हैं, वह रास्ता भी मालूम हो जायेगा।'—सैनिकों ने कहा।

सब के सब उन पेड़ों के झुरमुट में जाकर देखने लगे। उनको व्याघ्रदत्त अपने सैनिकों के साथ जाता हुआ दिखाई दिया। समरसेन व्याघ्रदत्त को देखते ही अपने दाँत पीसने लगा। परन्तु अपने दो-चार सैनिकों को लेकर वह उसका मुकाबला तो कर नहीं सकता था। इसलिये पहिले उसने शिवदत्त के ठिकाने के बारे में जानने की ठानी।

समरसेन अभी यह सोच ही रहा था कि एक सैनिक ने चिल्लाकर पेड़ की टहनी की ओर हाथ दिखाया। वहाँ एक टहनी पर से एक कागज़ लटका हुआ था। समरसेन ने चकित हो उसको पकड़ा और उतावला हो उसे खोलने लगा। उसमें यह लिखा हुआ था:—

'यह भयंकर प्रदेश है। जल्दी ही इस इलाके को छोड़कर चले जाओ।'

समरसेन ताड़ गया कि वह शिवदत्त की ही सलाह थी। यह भी लगता था कि उसने वह जल्दी में ही लिखा था। अक्षर टेढ़े-मेढ़े थे। समरसेन ने झट निश्चय कर लिया कि वहाँ से तुरंत जाने में ही अपना भला था।

समरसेन ने, जिस रास्ते से आया था, उसी रास्ते से वापिस जाना चाहा। परन्तु एक सैनिक ने पास की एक गुफ़ा की ओर इशारा कर कहा—"देखिये, लगता है, इस गुफ़ा में से कई आदमी गये हैं। रास्ता बना हुआ है।"

उस तरफ़ समरसेन ने दो चार कदम आगे रख, स्वयं देखा। उसे सैनिकों का कहना सच ही लगा। उसे यह भी सन्देह हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि शिवदत्त भी इसी रास्ते से बाहर जा भाग निकला हो।

समरसेन गुफ़ा के पास जा, अन्दर झांकने लगा। वहां अन्धेरा ही अन्धेरा था। एक सैनिक ने मशाल जलाई और उस मशाल की रोशनी में वे आगे बढ़ने लगे।

थोड़ी दूर जाने पर उनको जो दृश्य दिखाई दिया, उससे उन्हें डर भी लगा और आश्चर्य भी हुआ। एक जगह पत्थर का गढ़ा हुआ सिंहासन था। उसकी चारों ओर मनुष्यों की मूर्तियाँ थीं। उनका चेहरा, और उनके अस्त्र-शस्त्र देखकर मालूम होता था कि वे शिकारी थे।

'हो सकता है कि शिकारियों के यह किसी सरदार की समाधि हो। कुछ भी हो, मैंने अपने जन्म में इतनी भयंकर जगह कहीं भी न देखी। शिकारियों की इन मूर्तियों को देखकर, मुझे उससे कहीं अधिक डर लग रहा है, जो पहिले-पहल मुझे मान्त्रिक एकाक्षी को देखकर भी न हुआ था।'— समरसेन ने कहा।

जब उनका सरदार ही डरने लगा, तो सिपाहियों का तो कहना ही क्या! डर के मारे उनकी बुरी हालत थी। वे एक दूसरे की ओर ताकने लगे। एक सैनिक तो भय से पीछे की ओर भी भागने लगा।

समरसेन को बिना सोचे कही अपनी बात पर बड़ा अफ़सोस हुआ। सरदार को किसी भी हालत में अपने भय को बाहर व्यक्त नहीं करना चाहिये।

समरसेन बाकी सैनिकों को ढाढ़स दे, गुफ़ा के दरवाज़े की तरफ़ जाने लगा। इस इलाके में, जल्द से जल्द दौड़कर चले

जाने में ही, उसने अपना और अपने सैनिकों का फ़ायदा समझा। उसे शिवदत्त का ठिकाना मालूम करना बहुत मुश्किल लगा। शिवदत्त की बात छोड़ उसने फिर वहाँ जाना चाहा, जहाँ से वह आया था। परन्तु उसके लिये वहाँ भी परिस्थितियाँ अनुकूल न थीं। एक ओर एकाक्षी का डर था और दूसरी ओर कुम्भाण्ड का।

चाहे कितनी ही मुसीबतों में से गुज़रना पड़े, शिवदत्त से मिलना ही समरसेन ने अच्छा समझा। देवी का दिया हुआ त्रिशूल कहाँ था, यह वह जानता था। एकाक्षी और चतुर्नेत्र के गुरु का वह त्रिशूल था। इसलिये उसकी शक्ति महान थी।

परन्तु शिवदत्त के व्यवहार को देखकर समरसेन को थोड़ा सन्देह होने लगा। क्या सचमुच वह उसका मित्र था, या मित्र होने का ढोंग कर रहा था!

यह बात तो साफ़ थी कि नाव में रखी धन-राशि, और उसकी रक्षा करनेवाली नाग-कन्या के बारे में ये सब जानते थे। उसके लिये एकाक्षी और चतुर्नेत्र के अलावा, शिवदत्त और व्याघ्रदत्त भी ज़मीन-आसमान एक कर रहे थे। इन सब के आपसी झगड़ों में वह व्यर्थ स्वयं फँसता जा रहा था।

यह सोचता सोचता समरसेन गुफ़ा के बाहर निकला। वह सोच ही रहा था कि किधर जाया जाय कि उसे शोर-शराबा सुनाई दिया। फिर उस पर बरछे और बाणों की वर्षा होने लगी।

'दुश्मन हैं। पत्थरों के पीछे छुप जाओ।' चिल्लाता चिल्लाता समरसेन पत्थरों की तरफ़ भागा। उसको पहाड़ों पर से बाणों की वर्षा करते बहुत से सैनिक दिखाई दिये। ये कौन हो सकते हैं? व्याघ्रदत्त के सैनिक हैं या कुम्भाण्ड के शिकारी! (अभी और है)

[१४]

समरसेन शिवदत्त के सैनिकों के साथ उसके गाँव की तरफ़ चला गया था न। गाँव के पास पहुँचते ही व्याघ्रदत्त के सैनिकों ने गाँव को जला दिया था। तब शिवदत्त के सैनिकों ने उन्हें बताया कि उनका सरदार वहाँ से भाग गया था। उसको ढूंढता-ढूंढता समरसेन पहाड़ों के बीच में फँस गया था। बाद —

समरसेन एक बड़े पत्थर की आड़ में से पीछे की तरफ़ देखने लगा। उसके साथ के सैनिक भी हथेली में प्राण रख भय से काँप रहे थे। वे डर रहे थे, कहीं ऐसा न हो कि सुरंग में से हाथियों का एक बड़ा झुन्ड निकले और उनको चकनाचूर कर दे। वे एक तंग जगह में फँसे हुये थे। वहाँ से भाग निकलना भी आसान न था। भयभीत सैनिकों को और समरसेन को यकायक दो-तीन व्यक्तियों का आर्तनाद सुनाई दिया। वह आर्तनाद गुफा की परली तरफ़ से आ रहा था। परन्तु जिस जगह वे खड़े थे, वहाँ से बाहर कैसे निकलें?

जब सब के सब इस उलझन से बाहर निकलने का तरतीब सोच रहे थे, वह हाथी चिंघाड़ता चिंघाड़ता इधर-उधर देखने लगा। फिर जिस गुफा से समरसेन और उसके साथी आये थे, उसमें जा घुसा। थोड़ी देर

में उसके जल-प्रपात में से गुज़रने की ध्वनि भी सुनाई दी।

पहिले पहिले समरसेन अपनी जगह से बाहर निकला। उसके बाद सैनिक तुरंत उसके पीछे आये। रह रह कर गुफ़ा की परली तरफ़ से आर्तनाद अब भी बहुत साफ़ सुनाई दे रहा था।

'कोई बड़ी आफ़त में फँसा हुआ जान पड़ता है'—एक सैनिक ने कहा।

'इसमें तो कोई शक नहीं है। परन्तु हाथी यकायक क्यों उस तरफ़ से भागकर आया? कहीं यह दुश्मनों की चाल तो नहीं है? क्या वह सचमुच आर्तनाद है? नहीं तो....' समरसेन अभी कह ही रहा था कि गुफ़ा की परली तरफ़ से बड़ा शोर-शराबा होने लगा।

समरसेन ने सोचा कि अब हिचकिचाने से कोई फ़ायदा नहीं होगा। गुफ़ा के परली तरफ़वाले, चाहे दुश्मन हों, या दोस्त—खतरनाक हालत में हैं। इसलिये हिम्मत बाँधकर, आगे जाकर देखना उसने अपना फ़र्ज़ समझा।

समरसेन, सैनिकों को आता देखकर आगे बढ़ा। जब वे तंग गुफ़ा में थोड़ी दूर तक चले, तो उन्हें गुफ़ा का दरवाज़ा, और उससे सटा, बड़ा-सा तालाब दिखाई दिया। तालाब में कई पेड़ भी थे। पानी बहुत ही स्थिर था।

समरसेन ज्यों ही आगे गया तो उसने तीन आदमियों को घुटने भर पानी में, खम्भों से बँधा देखा। समरसेन को देखते ही वे और भी ज़ोर से चिल्लाने लगे।

न समरसेन, न सैनिक ही जान पाये कि आखिर मामला क्या था। बँधे हुये आदमियों को तत्क्षण विमुक्त करने में उन्हें कोई खतरा न मालूम हुआ। न उनके

बगल में, न कहीं आस-पास ही कोई था। उन्हें देखकर क्यों वे इतने ज़ोर से चिल्ला रहे थे? समरसेन को यह सोच बहुत आश्चर्य हुआ।

बँधे हुये व्यक्तियों के पास जाने के लिये पानी में उतरकर थोड़ी दूर जाना आवश्यक था। पानी गहरा नहीं है, यह वहाँ जमी हुई खाई ही बता रही थी। समरसेन ने अपनी तल्वार और तरकश सम्भाले, और पानी में उतर गया। सैनिक भी उसके पीछे पीछे चलने लगे। उनके पानी में घुसते ही वे तीनों व्यक्ति बहुत बुरी तरह चिल्लाये।

समरसेन आश्चर्य से देख रहा था। सामने एक मगर मुख बाये उसकी तरफ़ बढ़ा आ रहा था। तब उसको मालूम हुआ कि मामला क्या था। उन व्यक्तियों के भयंकर चिल्लाने का कारण यह मगर ही था।

तल्वार म्यान में रख, समरसेन ने धनुष पर बाण चढ़ाया। मगर मुख खोल, दाँत दिखाते दिखाते आगे चला आ रहा था। उसे थोड़ी दूर आने दिया, फिर समरसेन ने उसके नथने का निशाना बना, बाण छोड़ा। बाण की चोट से मगर थोड़ी देर पानी में छटपटाया। फिर पहिले की तरह आगे
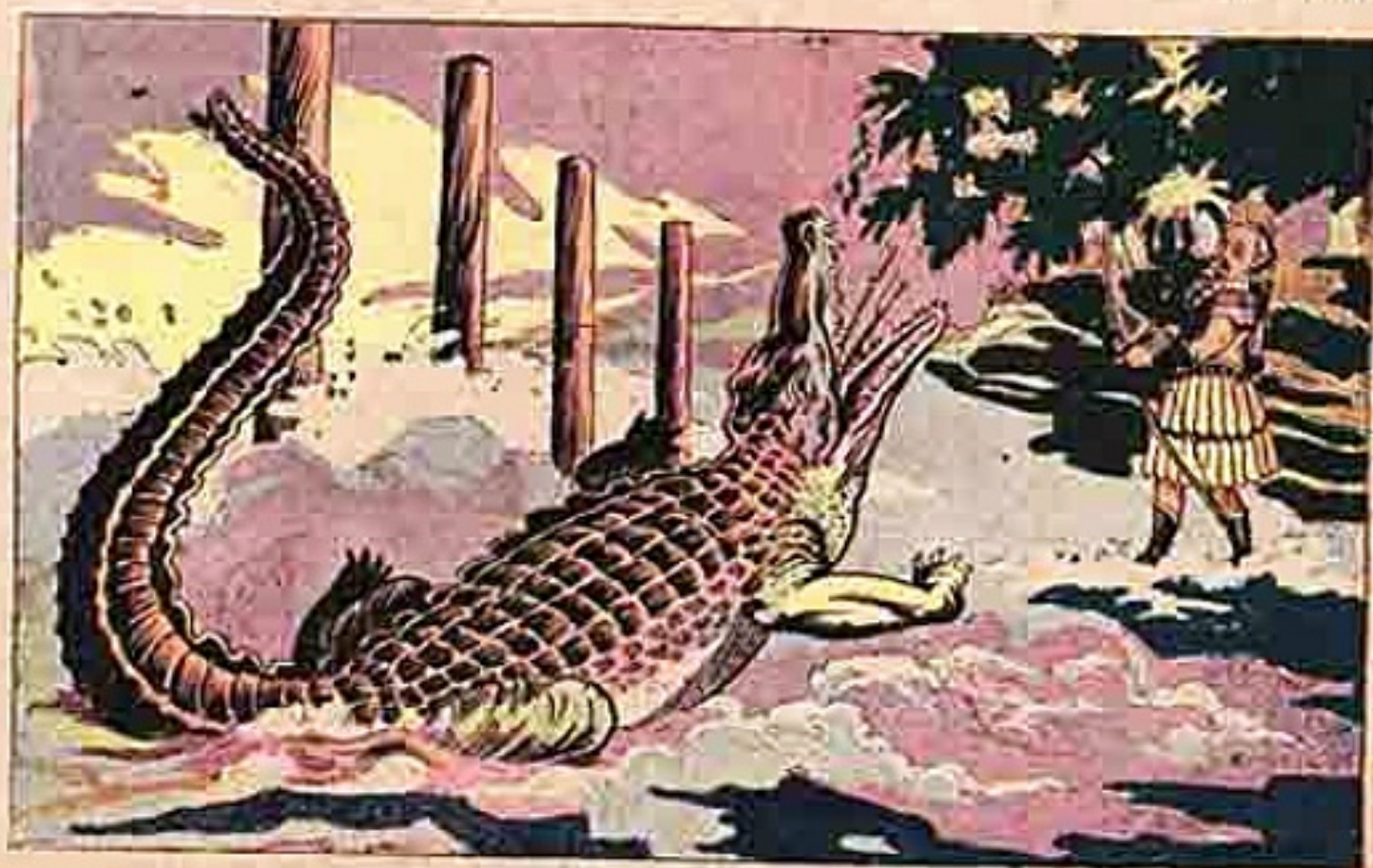
चढ़ने लगा। उसकी चमकती हुई आँखें डरावनी लगती थीं।

इस बार समरसेन ने अपनी तलवार से उसकी रीढ़ पर दो जबरदस्त घाव किये। मगर घाव न सह सका और पानी में तड़प-तड़पकर मरने लगा। भयभीत सैनिकों के प्राणों में प्राण आये।

बाद में समरसेन खम्भों से बँधे हुये व्यक्तियों के पास गया। जब समरसेन ने शक्ल देखी तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। ये तीनों, उसको व्याघ्रदत्त के पकड़ने के पूर्व, उस गुफा में थे। परन्तु चौथे आदमी का क्या हुआ? समरसेन को देखकर वे तीनों सैनिक भी आश्चर्य से स्तम्भित रह गये। उनके आनन्द की भी हद न थी। उनके प्राण तो बच ही रहे थे, साथ ही उनको अपना खोया हुआ सरदार भी मिल गया था।

'सरदार! हमने कभी कल्पना भी न की थी कि हम फिर आपको देख पायेंगे।'— एक सैनिक ने कहा।

'चौथे सैनिक का क्या हुआ?'— समरसेन ने पूछा।

'सरदार! आपने जिस मगर को मारा है, वह उसको जिन्दा निगल गया। अगर आप वक्त पर नहीं आते तो हमारी भी वही हालत हुई होती।''—सैनिकों ने बड़े विनय से जवाब दिया।

'तुमको किसने यों बाँध रखा है?'— समरसेन ने पूछा।

सैनिकों ने जो कुछ गुज़रा था, संक्षेप में कह सुनाया। वे भी अपने सरदार को खोजते हुये गुफा के खुफ़िया दरवाज़े से इस इलाके में पहुँचे थे। यहाँ व्याघ्रदत्त के सिपाहियों ने उनको बाँध दिया, और अपने सरदार के हुक्म के अनुसार, उनको मगरों

का पेट भरने के लिये इस तालाब में छोड़ दिया गया।

'हमें यहां बाँधकर उनके गये अभी कोई अधिक देरी नहीं हुई है। अगर उन पेड़ों के बीच में जांच-पड़ताल की गई, तो वे जिस रास्ते से गये हैं, वह रास्ता भी मालूम हो जायेगा।'—सैनिकों ने कहा।

सब के सब उन पेड़ों के झुरमुट में जाकर देखने लगे। उनको व्याघ्रदत्त अपने सैनिकों के साथ जाता हुआ दिखाई दिया। समरसेन व्याघ्रदत्त को देखते ही अपने दाँत पीसने लगा। परन्तु अपने दो-चार सैनिकों को लेकर वह उसका मुकाबला तो कर नहीं सकता था। इसलिये पहिले उसने शिवदत्त के ठिकाने के बारे में जानने की ठानी।

समरसेन अभी यह सोच ही रहा था कि एक सैनिक ने चिल्लाकर पेड़ की टहनी की ओर हाथ दिखाया। वहाँ एक टहनी पर से एक कागज़ लटका हुआ था। समरसेन ने चकित हो उसको पकड़ा और उतावला हो उसे खोलने लगा। उसमें यह लिखा हुआ था:—

'यह भयंकर प्रदेश है। जल्दी ही इस इलाके को छोड़कर चले जाओ।'

समरसेन ताड़ गया कि यह शिवदत्त की ही सलाह थी। यह भी लगता था कि उसने यह जल्दी में ही लिखा था। अक्षर टेढ़े-मेढ़े थे। समरसेन ने झट निश्चय कर लिया कि वहाँ से तुरंत जाने में ही अपना भला था।

समरसेन ने, जिस रास्ते से आया था, उसी रास्ते से वापिस जाना चाहा। परन्तु एक सैनिक ने पास की एक गुफ़ा की ओर इशारा कर कहा—"देखिये, लगता है, इस गुफ़ा में से कई आदमी गये हैं। रास्ता बना हुआ है।"

उस तरफ़ समरसेन ने दो चार कदम आगे रख, स्वयं देखा। उसे सैनिकों का कहना सच ही लगा। उसे यह भी सन्देह हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि शिवदत्त भी इसी रास्ते से बाहर आ भाग निकला हो।

समरसेन गुफ़ा के पास जा, अन्दर झाँकने लगा। वहाँ अन्धेरा ही अन्धेरा था। एक सैनिक ने मशाल जलाई और उस मशाल की रोशनी में वे आगे बढ़ने लगे।

थोड़ी दूर जाने पर उनको जो दृश्य दिखाई दिया, उससे उन्हें डर भी लगा और आश्चर्य भी हुआ। एक जगह पत्थर का गढ़ा हुआ सिंहासन था। उसकी चारों ओर मनुष्यों की मूर्तियाँ थीं। उनका चेहरा, और उनके अस्त्र-शस्त्र देखकर मालूम होता था कि वे शिकारी थे।

'हो सकता है कि शिकारियों के यह किसी सरदार की समाधि हो। कुछ भी हो, मैंने अपने जन्म में इतनी भयंकर जगह कहीं भी न देखी। शिकारियों की इन मूर्तियों को देखकर, मुझे उससे कहीं अधिक डर लग रहा है, जो पहिले-पहल मुझे मान्त्रिक एकाक्षी को देखकर भी न हुआ था।'—समरसेन ने कहा।

जब उनका सरदार ही डरने लगा, तो सिपाहियों का तो कहना ही क्या! डर के मारे उनकी बुरी हालत थी। वे एक दूसरे की ओर ताकने लगे। एक सैनिक तो भय से पीछे की ओर भी भागने लगा।

समरसेन को बिना सोचे कही अपनी बात पर बड़ा अफ़सोस हुआ। सरदार को किसी भी हालत में अपने भय को बाहर व्यक्त नहीं करना चाहिये।

समरसेन बाकी सैनिकों को ढाढ़स दे, गुफ़ा के दरवाज़े की तरफ़ जाने लगा। इस इलाके में, जल्द से जल्द दौड़कर चले

जाने में ही, उसने अपना और अपने सैनिकों का फ़ायदा समझा। उसे शिवदत्त का ठिकाना मालूम करना बहुत मुश्किल लगा। शिवदत्त की बात छोड़ उसने फिर वहाँ जाना चाहा, जहाँ से वह आया था। परन्तु उसके लिये वहाँ भी परिस्थितियाँ अनुकूल न थीं। एक ओर एकाक्षी का डर था और दूसरी ओर कुम्भाण्ड का।

चाहे कितनी ही मुसीबतों में से गुज़रना पड़े, शिवदत्त से मिलना ही समरसेन ने अच्छा समझा। देवी का दिया हुआ त्रिशूल कहाँ था, यह वह जानता था। एकाक्षी और चतुर्नेत्र के गुरु का वह त्रिशूल था। इसलिये उसकी शक्ति महान थी।

परन्तु शिवदत्त के व्यवहार को देखकर समरसेन को थोड़ा सन्देह होने लगा। क्या सचमुच वह उसका मित्र था, या मित्र होने का ढोंग कर रहा था?

यह बात तो साफ़ थी कि नाव में रखी धन-राशि, और उसकी रक्षा करनेवाली नाग-कन्या के बारे में ये सब जानते थे। उसके लिये एकाक्षी और चतुर्नेत्र के अलावा, शिवदत्त और व्याघ्रदत्त भी ज़मीन-आसमान एक कर रहे थे। इन सब के आपसी झगड़ों में वह व्यर्थ स्वयं फँसता जा रहा था।

यह सोचता सोचता समरसेन गुफ़ा के बाहर निकला। वह सोच ही रहा था कि किधर जाया जाय कि उसे शोर-शराबा सुनाई दिया। फिर उस पर बरछे और बाणों की वर्षा होने लगी।

'दुश्मन हैं। पत्थरों के पीछे छुप जाओ।' चिल्लाता चिल्लाता समरसेन पत्थरों की तरफ़ भागा। उसको पहाड़ों पर से बाणों की वर्षा करते बहुत से सैनिक दिखाई दिये। वे कौन हो सकते हैं? व्याघ्रदत्त के सैनिक हैं या कुम्भाण्ड के शिकारी? (अभी और है)

निराले चोर

एक शहर में तीन भाई रहा करते थे। उनके नाम थे—खतरा, आफ़त और मुसीबत। यद्यपि वे पेशे से चोर नहीं थे, तथापि चोरी करने में वे बड़े निपुण थे। उन लोगों ने अपनी निपुणता राजा को दिखानी चाही।

सबसे बड़े भाई खतरे ने राजा के पास यों चिट्ठी भेजी—

"मैं कल आपके शहर में चोरी करने जा रहा हूँ। इसलिये लोगों को सावधान रहने के लिये ढिंढोरा पिटवा दीजिये—आपका विनीत, खतरा।"

चोरी करनेवाला क्या कहकर आता है! राजा ने सोचा, शायद किसी ने शरारत करने के लिये यह लिख भेजा है। पर चूँकि प्रजा की रक्षा करना उसका कर्तव्य था, इसलिये उसने शहर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि खतरा नाम का कोई आदमी कल शहर में चोरी करने आ रहा है। इसलिये सब लोग चौकन्ने रहें।

अगले दिन खतरा शहर में पहुँच गया। ढाबेवाली बुढ़िया के पास जाकर खाना तैयार करने के लिये कहा।

"मैं अभी कुँए से पानी लाकर खाना बनाऊँगी, बैठो, बेटा!"—यह कह बुढ़िया घड़ा लेकर चली गई। बाद में खाना खाते खाते खतरे ने बुढ़िया से पूछा—"क्या हालचाल है!"

"सुना है, खतरा नाम का आदमी शहर में चोरी करने आ रहा है। पैसेवाले डर के मारे काँप रहे हैं।"—बुढ़िया ने कहा।

खतरे ने भोजन कर बुढ़िया को एक रुपया दिया। बुढ़िया ने "एक" कहकर उसको कसोरे में डाल दिया।

राजेश्वर प्रसाद अरोड़ा

खतरा ढाबा छोड़कर एक बड़ी दुकान के पास गया। "सेठजी! पान के पत्तों की एक एक ढेरी क्या भाव दे रहे हैं?"

"सस्ती ही है, बेटा! सिर्फ चार आने"—सेठ ने कहा।

"यह लीजिए चार आने। अगर एक ढेरी में तीन सौ पत्तों से कम हुये, तो मैं न लूँगा। पहिले मुझे अपनी ज़रूरत के लिये पचीस पत्ते इधर दे दीजिए। बाकी मैं फिर ले जाऊँगा। अब मैं एक ज़रूरी काम पर बगलवाले बाज़ार में जा रहा हूँ।"—खतरे ने कहा।

पैसा मिल ही गया था, इसलिये सेठ ने कहा—"जैसा तुम चाहो करो, बाबू!"

वहाँ से खतरा एक कपड़े की दुकान पर गया। उसने पूछा—"एक अच्छा-सा काश्मीर शाल दिखायेंगे?" एक शाल, जिसका दाम तीन सौ रुपया था, उसने चुना। बहुत देर तक भाव-ताव करने के कारण दुकानदार उसको २५ रुपये कम करके देने में राज़ी हो गया।

"देखिये। सुना है, शहर में चोरों का अधिक डर है। इसलिये मैं साथ रुपये नहीं लाया हूँ। मैंने अपना सारा रुपया उस सेठ की दुकान में रख छोड़ा है। अगर मेरे साथ अपना कोई आदमी भेजें, तो मैं तुरंत रुपये भिजवा दूँगा।"—खतरे ने कहा।

दुकानदार ने शाल खतरे को दे दिया, और पैसा वसूल करने के लिये अपना भाई साथ भेज दिया। खतरे ने सेठ के पास आकर कहा—"सेठजी, मैं ज़रा जा रहा हूँ। इस आदमी को २५ कम तीन सौ देकर जल्दी भिजवा दीजिये।"

"अच्छा बाबू, ऐसा ही सही। आप जाइये।" कहते कहते सेठ ने पान के पत्तों की ढेरी निकाली। खतरा चला गया।

सेठ पान के पत्ते एक एक करके गिनने लगा। दुकानदार के भाई ने कहा—"सेठजी! क्या मुझे जल्दी न भेज सकेंगे? उधर बहुत काम बाकी पड़ा है।"

"तुम्हारा ही तो काम देख रहा हूँ भाई!"—सेठ ने कहा।

"आप तो पान के पत्ते गिन रहे हैं और कहते हैं कि मेरा काम देख रहे हैं?"—दुकानदार के भाई ने पूछा।

दोनों झगड़ने लगे।

"उस आदमी से हमें पचीस कम तीन सौ रुपये मिलने हैं।"—दुकानदार के भाई ने कहा।

"और मुझे उन्हें देने हैं, पचीस कम तीन सौ पान के पत्ते! मैं भला रुपये कहाँ से लाकर दूँ?"—सेठ ने कहा।

दोनों लड़ते-झगड़ते राजा के पास फ़ैसले के लिये गये। राजा ने सब-कुछ सुनकर अनुमान किया कि वह खतरे की ही करतूत थी। इसलिये उसने उन दोनों को नुकसान बराबर बाँट लेने के लिये कहा।

उस दिन शाम को राजा के पास एक और चिट्ठी पहुँची। आफ़त ने इत्तिला दी थी कि वह अगले दिन शहर में आकर चोरी करेगा।

"क्या हालचाल होंगे बेटा! कल खतरा दो दुकानदारों को धोखा देकर चम्पत हो गया। आज सुना है, कोई आफ़त चोरी करेगा। उसको पकड़ने के लिये, मन्त्री खुद कोशिश कर रहे हैं।"—बुढ़िया ने कहा।

"अरे अरे! शायद मन्त्री बाल-बच्चोंवाले हैं!"—आफ़त ने तरस खाते हुए कहा।

"बेटा! उनकी एक ही लड़की है। छुटपन में ही उसका पति घर छोड़कर भाग गया था। अभी तक वापिस नहीं आया है।"—बुढ़िया ने बताया।

इस बार राजा चौकन्ना हो गया। मन्त्री को बुला कर कहा—"आफ़त नामवाला आदमी, कल शहर में चोरी करेगा। उसको पकड़ने की जिम्मेवारी तुम्हारी रही।"

अगले दिन आफ़त ने शहर में पहुँचकर बुढ़िया के ढाबे में खाना परोसने के लिये कहा। पानी लाने के लिये बुढ़िया कुँए के पास गयी। उस बीच में आफ़त ने कसोरे में से रुपया चुरा लिया।

"क्यों नानी, क्या हालचाल है?" आफ़त ने पूछा।

आफ़त भोजन खा, बुढ़िया को रुपया दे चला गया। बुढ़िया ने "दो" कहा और उसको कसोरे में डाल दिया।

आफ़त वेष बदलकर शहर में एक तालाब के किनारे, पेड़ के नीचे बैठ गया। आने-जानेवालों से कहने लगा कि वह मन्त्री का दामाद है। यह खबर जल्दी ही मन्त्री तक पहुँची। वह तालाब के किनारे आफ़त को पा, सोचने लगा कि उसका दामाद वापिस आ गया है। वह बड़ा खुश हुआ और उसको अपने घर ले गया। रात को जब भोजन करने के बाद मन्त्री

चोर को पकड़ने के लिये जाने लगा, तो आफ़त ने कहा कि वह भी उसकी मदद के लिये साथ आयेगा। उसने ज़िद पकड़ी। मन्त्री मान गया।

मन्त्री के घर के आंगन में ही अपराधियों को सज़ा देने के लिये एक यन्त्र था। उसको देख कर आफ़त ने कहा—"यह क्या है, ससुर जी?"

"अगर इसमें सिर रखकर कील कस दी जाय तो दर्द होती है, और तब चोर सच बता देते हैं।"—मन्त्री ने कहा।

"मैं अपना सिर उसमें रखता हूँ, और आप कील कस दीजिये, ससुर जी!"—आफ़त ने कहा। पर मन्त्री ने न माना।

"अगर तू देखना ही चाहता है, तो देख, मैं अपना ही सिर रखे देता हूँ।" कहते कहते मन्त्री ने उस यन्त्र में सिर रख दिया। आफ़त ने ज़ोर से कील कस दी।

"उतना मत कसो। गले में दर्द हो रहा है। जल्दी कील ढीली करो।"—मन्त्री दर्द के मारे चिल्लाया।

"यह कील तो ढीली नहीं हो रही है; क्या करूँ ससुर जी?"—आफ़त गिड़-गिड़ाने लगा।

"तो जा, सास से कहकर हथौड़ा वगैरह ले आ"—मन्त्री ने कहा।

आफ़त मन्त्री की पत्नी के पास जाकर कहने लगा:—

"सास जी, सास जी! ससुर जी को चोर तंग कर रहे हैं। घर में रखे गहने, जवाहरात जल्दी दे दो।"

मन्त्री की पत्नी ने तुरंत कुछ न दिया, और इधर उधर के सवाल पूछने लगी।

"सास जी दे नहीं रही हैं, ससुर जी"—आफ़त ज़ोर से चिल्लाया।

"जल्दी दे दो। मेरी जान जा रही है।"—मन्त्री चिल्लाया। मन्त्री की पत्नी ने फिर कुछ न पूछा और घर में रखे गहनों की पोटली बाँध उसको दे दी। आफ़त अपने रास्ते पर चला गया। अगले दिन मन्त्री को यन्त्र में से निकाला गया।

उसी दिन राजा के पास मुसीबत से तीसरी चिट्ठी मिली। चिट्ठी पढ़ते ही राजा खौल उठा। दो बार चोर कहकर आये, पर उन्हें पकड़ा न जा सका। इसलिये स्वयं राजा ने उन्हें इस बार पकड़ने की ठानी। अगले दिन मुसीबत शहर में आया। ढाबेवाली बुढ़िया के पास जाकर खाना माँगा। ज्यों ही वह घड़ा लेकर पानी लाने गई कि उसने कसोरे में से रुपया चुरा लिया।

जब बुढ़िया ने वापिस आकर, खाना बनाकर उसे परोसा तो मुसीबत ने उससे पूछा—"क्या हालचाल है?" "बेटा! क्या हालचाल होंगे? एक रोज़ खतरा आकर चोरी कर गया, और दूसरे दिन आफ़त आकर मन्त्री की आँखों में धूल झोंक गया। आज सुना है, मुसीबत नाम का कोई आयेगा। उसको पकड़ने के लिये राजा ने स्वयं ठानी है।"—बुढ़िया ने कहा।

मुसीबत ने रुपया दिया। बुढ़िया ने "तीन" कहा और उसको कसोरे में डाल दिया।

मुसीबत ने शहर में तरह तरह की खाने की चीज़ें खरीदीं। उनको एक बोरी में रख श्मशान में ले गया। और वहाँ एक पेड़ के नीचे उनकी दुकान लगा ली। रात को दिया जलाकर बैठ गया।

रात को जब राजा घोड़े पर चढ़कर शहर का पहरा दे रहा था, तो उसको अन्धेरे में चिराग दिखाई दिया। उसे सन्देह हुआ। वह मुसीबत के पास पहुँचा।

"इतनी रात में यहाँ तूने दुकान क्यों लगा रखी है? कौन आयेगा?"—राजा ने उससे पूछा।

"महाराज, चोर इधर से आकर मेरे पास से खाने की चीज़ें खरीदकर मुझे खूब पैसा दे जाते हैं। उनके आने का समय हो गया है। आप चले जाइये, हुजूर! गरीब हूँ। पांच-दस पैसे बना लूँगा।" मुसीबत ने कहा।

"मैं तुझे उनसे दसगुना अधिक पैसा दूँगा। मुझे यहीं छुपा रहने दो!"—राजा ने कहा।

"यहाँ छुपे बैठने के लिये जगह कहाँ है? अगर छुपकर बैठना ही है, तो उस बोरी में बैठ जाइये। मैं ऊपर से बाँध दूँगा। चोरों को मालूम न हो सकेगा।"—मुसीबत ने कहा।

कहीं कपड़े खराब न हो जायें, इसलिये अपनी पोशाक और पगड़ी उतार राजा बोरी में घुस गया। मुसीबत ने बोरी बांध दी।

"महाराज! चोर आते-से लगते हैं। मैं आपका घोड़ा दूर बाँध आता हूँ। आप कोई आवाज़ मत कीजिये।" कहते हुये मुसीबत ने राजा की पोशाक, पगड़ी, तल्वार पहिनी, और घोड़े पर चढ़ सीधा खज़ाना गया। खज़ाने के नौकरों ने मुसीबत को देखकर समझा कि राजा ही

आये हैं। अन्धेरे में चेहरा साफ़ साफ़ न दिखाई दिया।

मुसीबत ख़ज़ाने पर धावा बोलनेवाला है। सारा रुपया गट्ठर बाँधकर इधर ले आओ।" मुसीबत ने आवाज़ बदलकर कहा।

नौकरों ने जैसा उसने कहा, वैसा ही किया। ख़ज़ाने का सारा रुपया ले मुसीबत चम्पत हो गया।

अगले दिन किसी ने बोरी खोलकर राजा को बाहर निकाला।

कहकर चोरी करनेवालों को पकड़ने के लिये राजा ने बहुत कोशिश की, पर वे मिले नहीं। आखिर, तीनों भाई अपने आप राजा के पास गये।

"तुम कौन हो?"—राजा ने पूछा।

"जब उन्होंने अपने नाम बताये, तो राजा को बहुत गुस्सा आया। उनको कैद में डाल देने के लिये सैनिकों को आज्ञा दी।

"जल्दबाज़ी मत कीजिये महाराज! हम चोर नहीं हैं। हम चोर-विद्या में निपुण हैं। हम अपनी शक्ति महाराज को दिखाकर इनाम लेने आये हैं। चोरी की हुई कौड़ी कौड़ी जिन जिनकी है, हम उनको वापिस देंगे।"—तीनों भाइयों ने कहा।

राजा का पैसा राजा को, मन्त्री के गहने मन्त्री को, दुकानदार को काश्मीर शाल, और बुढ़िया को दो रुपये उन्होंने वापिस कर दिये।

तब राजा ने सन्तोष के साथ पूछा—"तुम्हें क्या चाहिये?"

"महाराज! आप हमें अपनी नौकरी में ले लीजिये। आपके राज्य में चोरों को न रहने देंगे। यही इनाम हम माँगते हैं।"—तीनों भाइयों ने कहा।

उनकी इच्छा के अनुसार, उनको अपनी नौकरी में रख, राजा ने उनका सम्मान किया।

चन्द्रहार

किसी गाँव में एक कंजूस आदमी रहा करता था। उसका नाम दमड़ीमल था। उसकी पत्नी सौन्दर्यवती बहुत ही सुन्दर थी। यद्यपि अच्छी तरह जिन्दगी बसर करने के लिये उसके पास सब साज-सामान थे, फिर भी वह दमड़ी दमड़ी जोड़ता गरीबों की तरह रहता। पत्नी के लिये एक गहना भी न बनवाता।

एक बार पड़ोस के बनवारीलाल ने अपनी पत्नी के लिये पाँच सौ रुपये का चन्द्रहार बनवाया। बनवारीलाल की पत्नी उस चन्द्रहार को गले में डाल सारे गाँव में घूम-घाम कर सौन्दर्यवती के घर भी हो आई। जब से सौन्दर्यवती ने वह चन्द्रहार देखा, तब से उसे नींद न आई। वह ज़िद करने लगी कि उसे भी वैसा चन्द्रहार चाहिये। वह बहुत ही सुन्दर था।

"क्यों फ़ालतू रुपया खर्च करती हो? कपड़ा, गेहूँ वगैरह हो तो कुछ बात भी है। पाँच सौ रुपये लगाओ तो चार बीघे ज़मीन मिलती है। दो जोड़े बैल आते हैं। क्या पागलपन है!"—दमड़ीमल ने पत्नी को बुरा-भला कहा।

"बनवारीलाल के पास क्या हमसे कुछ अधिक पैसा है? फिर हमारे बाल-बच्चे भी नहीं हैं। उनके चार बच्चे हैं। बनवारीलाल की पत्नी भी बन्दरी-सी लगती है। तब भी बनवारीलाल ने पत्नी के लिये चन्द्रहार बनाकर दिया। आप कम से कम एक नथ तो बनवाकर दीजिये।"—सौन्दर्यवती ने पति से कहा।

परन्तु दमड़ीमल ने लाख खुशामद करने पर भी, पत्नी की इच्छा को पूरा करने के लिये राज़ी न हुआ।

कुमारी विमला पनिकर

सौन्दर्यवती ने सोचा कि अगर पति ने उसके गले में चन्द्रहार देखा, तो हो सकता है, वह भी उसके लिये एक बनाकर दिलवा दे। इसलिये एक दिन वह बनवारीलाल की पत्नी से चन्द्रहार उधार ले आई, और उसे गले में लगा, पति के पास आकर मुस्कुराते हुये पूछा—"कैसा लग रहा है जी?"

दमड़ीमल पत्नी के गले की ओर देखकर क्षण भर तो बड़ा खुश हुआ। पर कहीं ऐसा न हो, वह चन्द्रहार बनवाने के लिये ज़िद करने लगे, इस डर से दमड़ीमल ने कहा—"अच्छा तो लग रहा है, पर इतनी कीमती चीज़ों की हमें क्या ज़रूरत है? उनका गहना उन्हें वापिस कर दे।"

"अभी तो बहुत काम पड़ा है। कल सवेरे दे दूँगी।"—सौन्दर्यवती ने नाक-भौं चढ़ाते हुये कहा।

सवेरे पत्नी ने पति से पूछा—

"क्या आपने रात को पिछवाड़े का दरवाज़ा भूल से खुला छोड़ दिया था?"

"नहीं तो! कहीं चोर तो नहीं आये? उनका चन्द्रहार वापिस कर दिया था न? कोई चीज़ चोरी तो नहीं गई है!"—दमड़ीमल ने डरते डरते पूछा।

"चन्द्रहार को मैंने सन्दूक में रख दिया था। घर में तो कोई चीज़ गई नहीं लगती।"—कहती कहती सौन्दर्यवती ने सन्दूक खोलकर देखा। उसमें चन्द्रहार न था।

तब क्या था? सौन्दर्यवती छाती पीट पीटकर रोने लगी। दमड़ीमल के तो होश गायब हो गये।

"पागल कहीं की! कीमती चीज़ों को क्या तुरंत वापिस नहीं किया करते? अब पाँच सौ रुपये फेंककर, गहना बनवाकर उनको देना ही होगा न!"—दमड़ीमल ने उबलते हुये कहा।

"क्या मैंने कोई सपना देखा था कि आप पिछवाड़े का दरवाज़ा यों खुला छोड़ देंगे?"—सौन्दर्यवती ने पूछा।

कुछ भी हो, दमड़ीमल को पाँच सौ रुपये का चन्द्रहार आखिर बनवाना ही पड़ा।

चन्द्रहार को पत्नी को देते हुये उसने कहा "—जा, जल्दी इसे बनवारीलाल के घर में दे आ। लापरवाही की जो सज़ा मिली है, वह काफ़ी है। आइन्दा, होशियारी से रहना।"

सौन्दर्यवती पति की बात सुनती गई और मन ही मन हँसती गई। चन्द्रहार को गले में डालकर उसने यों कहा :—

"यह हमारा ही है। मैंने चन्द्रहार सन्दूक में नहीं रखा था। अलमारी में रख कर भूल गई थी। जब बाद में वह दिखाई दिया, तो उसी रोज़ उसे बनवारी लाल जी के घर वापिस दे आयी थी। अब हमें बनवारीलाल को कुछ देने की ज़रूरत नहीं है।"

पत्नी की चाल समझकर दमड़ीमल चकरा गया। उसे न सूझा कि क्या कहा जाय।

सोने का मोर

ब्रह्मदत्त के काशी राज्य में बोधिसत्व एक सोने के मोर के रूप में पैदा हुये।

एक बार जब काशी राजा की एक पत्नी को सपने में सोने का मोर दिखाई दिया तो उसने उसे पाने की पति से ज़िद की। राजा ने मन्त्रियों से सलाह-मशवरा किया। उन्होंने कहा कि शायद इस विषय में ब्राह्मणों को मालूम हो! जब ब्राह्मणों से पूछा गया तो उन्होंने कहा कि यह बात शिकारियों को मालूम हो सकती है।

राजा ने दण्डकारण्य के पास रहनेवाले एक शिकारी को बुलाकर कहा—"अगर तू उस सोने के मोर को जिन्दा पकड़ लाया तो तुझे बहुत-सा इनाम दूँगा।" शिकारी मान गया। वह मोर के लिये सात वर्ष तक फँदा डालता रहा। परन्तु मोर न फँसा। शिकारी मर गया। मोर चाहनेवाली वह रानी भी गुज़र गई। राजा ने किले की ड्योढ़ी के सामने यह घोषणा खुदवा दी—"दण्डकारण्य में एक सोने का मोर विहार कर रहा है। जो कोई उसका माँस खायेगा, वह न बूढ़ा होगा, न मरेगा ही।"

उस राजा के बाद युवराज ने सोने के मोर के लिये एक और शिकारी भेजा। परन्तु वह भी मोर पकड़ने में सफ़ल न हुआ। इस तरह छः पीढ़ियाँ गुज़र गईं।

सातवीं पीढ़ी का राजा जब गद्दी पर बैठा, तो उसने भी वह घोषणा देखी। उसने भी शिकारी को बुलवाया। शिकारी ने चालाकी से मोर को पकड़कर काशी राजा को दे दिया।

उस सोने के मोर को देखते ही राजा को आश्चर्य हुआ। उसमें मोर के लिये एक सम्मान-भावना भी पैदा हुई। उसके लिये

उसने अपने सिंहासन के पास एक उपयुक्त सिंहासन भी बनवा दिया।

तब मोर का रूप धारण किये हुये बोधिसत्व ने पूछा—"राजा! तुम मुझे क्यों बन्दी बनाकर यहाँ लाये हो?"

"तेरा माँस खाने से न बुढ़ापा आता है, न मौत ही।"—राजा ने कहा।

"तो फिर क्या मैं मारा ही जाऊँगा?"—बोधिसत्व ने पूछा।

"हाँ"—राजा ने कहा।

"अरे पागल! जब मेरा मरना ही सच है, तो मुझे खानेवाले मरे बगैर कैसे रह सकते हैं?"—बोधिसत्व ने फिर पूछा।

"तेरा तो सुनहरा रंग है। तेरा माँस खाने वाले का भी, सुना है, वही रंग हो जाता है। फिर वह मरता भी नहीं है।"—राजा ने कहा।

"अच्छा! तो राजा मैं तुम्हें बताता हूँ, मेरा रंग सुनहरा हो जाने का क्या कारण है। पहिले किसी ज़मानेमें मैं इस राज्य का महाराजा था। मैंने न्याय और धर्म के अनुसार राज्य का परिपालन किया। इसी लिये मैं इस जन्म में सोने के मोर के रूप में पैदा हुआ हूँ।"—बोधिसत्व ने कहा।

काशीराज चकित हो गया। "क्या धर्म-परिपालन का क्या यह परिणाम है? क्या तू इस बात को सिद्ध कर सकता है? क्या कोई सबूत है?"—राजा ने पूछा।

"क्यों नहीं है? जब मैं महाराजा था तो मैं एक नवरत्न खचित दिव्य-रथ में सवारी किया करता था। वह बगीचे में, तालाब के किनारे भूमि में दबा हुआ है"—बोधिसत्व ने कहा।

काशी राजा ने जब तालाब के किनारे खुदवाया, तो वह दिव्य-रथ दिखाई दिया।

तब से राजा ने बोधिसत्व को अपने गुरु के रूप में रख लिया।

बुद्धिमत्ता

पुराने ज़माने में जब काश्मीर देश पर अवन्ती वर्मा राज करता था, तो वहाँ हर वर्ष अकाल पड़ता।

काश्मीर देश बड़े बड़े ऊँचे पहाड़ों के बीच में है। वहाँ नदियाँ पर्वतों से निकल कर बड़ी तेज़ी से नीचे के मैदानों की ओर बहती हैं। इसलिये नदियों में अक्सर बाढ़ आया करती।

झील महापद्म के पानी से हजारों बीघों की सिंचाई होती थी, और अच्छी-अच्छी फ़सलें होती थीं। पर लोगों का इतना सौभाग्य न था कि हर वर्ष अपनी मेहनत का फल पा सकें। क्योंकि उसी इलाके में, बितस्ता नदी में अक्सर बाढ़ आया करती, और बाढ़ का पानी जब झील में गिरता, तो झील का पानी भी दूर दूर तक फैल जाता। बहुत हानि होती।

अवन्ती वर्मा बहुत ही धर्म-परायण व्यक्ति था। वह यह सोचा करता कि उसी के किसी कसूर का उसकी प्रजा फल भोग रही थी। उसने देवी-देवता की पूजा करवाई, यज्ञ-याग करवाये। पर नदियों में बाढ़ आना बन्द न हुआ।

जब इस तरह काफी समय बीत गया तो राजा के कानों में एक खबर पड़ी। सुय्या नाम का व्यक्ति, जो कोई उसको मिलता, उसके सामने बड़ी हाँका करता कि वह नदियों की बाढ़ रोक देगा। लोग उसे पागल समझते और उससे नित बकवास करवाया करते।

अवन्ती वर्मा बाढ़ रोकने के लिये सब कुछ करने को तैयार ही था, इसलिये उसने सुय्या के पास खबर भिजवाई। सुय्या राजा के पास आया।

प्रमोद कुमार गर्ग

"सुना है, तू कह रहा है कि तू दुर्भिक्ष मिटा देगा। क्या यह सच है?"—राजा ने पूछा।

"हाँ, महाराज! अगर नदी में बाढ़ रोक दी गई तो दुर्भिक्ष अपने आप ही जाता रहेगा।"—सुय्या ने कहा।

"बाढ़ को कैसे रोका जाय? क्या तू रोक सकता है?"—राजा ने पूछा।

"हाँ, महाराज! मैं रोक सकता हूँ।" सुय्या ने कहा।

"जो काम हम नहीं कर सके, वह काम तू अकेले कैसे कर सकता है?" राजा ने पूछा।

"पैसा दिलवाइये। दुनिया में ऐसा कौन-सा काम है, जो पैसा न कर सके।"

"जितना ख़ज़ाने में धन है, सब ले जा। पर यह देख कि अगले वर्ष बाढ़ न आये।"—राजा ने कहा।

मन्त्री ने राजा को रोकना चाहा, पर राजा ने मन्त्री की एक न सुनी।

सुय्या ख़ज़ाने में से जितनी अशर्फ़ियाँ वह ढो सका, उनका एक गठ्ठर बाँधकर वहाँ से निकल पड़ा। लोग भी चिल्लाते, हँसी उड़ाते उसके पीछे हो लिये। कइयों ने सोचा कि राजा को चकमा देकर वह धन ले जा रहा है। फिर कई ने कहा, सुय्या के साथ साथ राजा भी पागल हो गया है। पर सब के सब यह देखने के लिये उतावले हो रहे थे कि इतने धन का सुय्या क्या करता है।

हर वर्ष हानि पहुँचानेवाली वितस्ता कुछ दूर जाकर, पहाड़ों के बीच—घाटी में से बहती थी। सैकड़ों वर्षों से दोनों तरफ़ के पहाड़ों पर से बड़े बड़े पत्थर लुढ़ककर नदी में गिरने के कारण, पत्थरों का एक पुल-सा बन गया था, जो पानी के प्रवाह को रोक

करता था। जब नदी में बाढ़ न होती थी, तो लोग उन्हीं पत्थरों पर से नदी पार किया करते थे। उन्हीं पत्थरों के कारण नदी में बाढ़ आती। बाढ़ के कारण झील का पानी चारों तरफ़ जाता और खेती को हानि पहुँचती।

सुय्या धन का गट्ठर लेकर उस जगह पर पहुँचा। उसके पीछे पीछे हज़ारों आदमी भी चले आये। सुय्या नदी के बीचों-बीच पड़े पत्थरों पर गया, और हाथ भर भरकर अशर्फ़ियाँ फेंकता नदी के पार जाने लगा।

लोगों में होहल्ला शुरु हुआ। अब यह साबित हो गया था कि सुय्या सचमुच पागल था। नहीं तो क्या वह सोने की अशर्फ़ियों को नदी में उस तरह फेंकता? उसको रोकना भी किसी के बस में न था।

लोगों में यकायक चहलपहल होने लगी। कई जल्दी जल्दी पानी में उतरकर अशर्फ़ियाँ खोजने लगे। और कई झुण्ड बना कर, बड़े-बड़े पत्थरों को एक तरफ़ हटाकर उसके नीचे पड़ी अशर्फ़ियों को ढूँढने लगे।

थोड़ी देर में यह बात आसपास के गाँवों में भी फैली। लाखों आदमी आकर, हज़ारों वर्षों से पड़े हुये पत्थरों को नदी के बीच में से हटाकर किनारे करने लगे। उनका उत्साह बढ़ाने के लिये सुय्या ख़ज़ाने से और पैसा लाता जाता, और पत्थरों के बीच डालता जाता।

साँझ होते होते पत्थरों की उस दीवार का नाम तक न रहा। पानी बिना रुके बहता जाता था। जिन लोगों ने मेहनत की, उनको अशर्फ़ियाँ भी मिलीं।

तब से काश्मीर में न बाढ़ आई, न दुर्भिक्ष ही पड़ा। प्रजा सुख से रहने लगी।

सुय्या की बुद्धिमत्ता और देश की सेवा की राजा ने बहुत प्रशंसा की। उसको बहुत-सा धन देकर उसका सम्मान किया।

दोषी कौन ?

किसी देश में कोई रईस व्यापारी रहा करता था। उसके तीन लड़के थे। मरते समय उसने अपने तीनों लड़कों को पास बुलाकर कहा—"बेटो! मेरे लिये यम के दूत आनेवाले हैं। मैंने बड़ी मेहनत कर काफ़ी सम्पत्ति जमा की है। पर मेरी सम्पत्ति में ये तीन रत्न सब से अधिक बहुमूल्य हैं। अगर किसी कारण तुमने आपस में बँटवारा करना चाहा, तो तीनों एक एक रत्न ले लेना। क्योंकि ये तीनों एक ही मूल्य के हैं।"

पिता के गुज़र जाने के बाद, भाइयों ने आपस में बँटवारे का निश्चय किया। जब उन्होंने रत्नों को लेने के लिये तिजोरी खोली, तो दो ही रत्न थे। तीसरा रत्न किसी ने चुरा लिया था। चोर उन तीनों भाइयों में से ही कोई हो सकता था।

"हम में से ही किसी एक ने रत्न लिया है। यह भी हो सकता है कि चोरी करने वाला अपना अपराध स्वीकार करने में दूसरों के सामने हिचके। इसलिये अच्छा होगा कि कल तक रत्न को यथा स्थान पर रख दिया जाय।"—बड़े भाई ने कहा।

"अगर यह न हुआ, तब क्या किया जाय?"—मंझले भाई ने पूछा।

"तीनों जाकर राजा के पास फ़रियाद करें। दोषी का पता लगाना राजा की जिम्मेवारी जो है!"—बड़े भाई ने बताया।

"यह बात बिल्कुल ठीक है"—तीसरे भाई ने कहा।

एक दिन और बीत गया। चुराया हुआ रत्न वापिस न मिला। उसी दिन तीनों भाई राजा के पास गये। उससे निवेदन किया कि दोषी का पता लगावें।

राजेन्द्रकुमार जैन

उनका कहना सुनकर राजा को आश्चर्य हुआ। वह उन तीनों भाइयों को अच्छी तरह जानता था।

"आपके पिता बहुत ही ईमानदार थे। मेरे अच्छे मित्र भी थे। उनके पुत्रों को इस प्रकार मेरी सहायता माँगता देख मुझे खेद भी होता है और सन्तोष भी। थोड़े दिनों में मैं आपका काम कर दूँगा। तब तक आप गरीब बुढ़िया के घर ठहरिये। आपकी हर आवश्यकता को पूरा करने का इन्तज़ाम मैं करवा दूँगा।"—राजा ने बड़े प्रेम से कहा।

तीनों भाई गरीब बुढ़िया के घर गये। एक एक करके दिन बीतने लगे। राजा भी इस बात के बारे में रात-दिन सोचता रहता, पर उसको यह न सूझा कि वह सुनवाई कैसे शुरू करे और कैसे दोषी का पता लगाये। एक दिन गरीब बुढ़िया को बुलवाया और उससे यों पूछा—

"क्यों बुढ़िया! अतिथियों के कारण तुझे तो कोई कष्ट नहीं हो रहा है?"

"नहीं महाराज! वे तीनों बहुत ही अच्छे हैं। कितने भलेमानस, कितने इज़्ज़तदार!"—बुढ़िया ने कहा।

"इसी कारण ही मुझे कुछ सूझ नहीं रहा है। उनमें कोई ज़रूर हिम्मती चोर है।"—राजा ने कहा।

बुढ़िया को अचरज हुआ। उसने उनके बारे में अधिक जानना चाहा। तब राजा ने जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया।

"तो महाराज! मैं पता लगा लूँगी कि उनमें कौन चोर है। आप फ़िक्र मत कीजिये।"—बुढ़िया ने कहा।

उस रात को बुढ़िया ने तीनों भाइयों को भोजन परोसते हुये एक छोटी-सी कहानी सुनाई। वह कहानी यह है—

"एक था राजा। उसका नाम था सिंहकेतु। उसके गुणवती नाम की एक लड़की थी। बड़ी होने तक एक पंडित के यहाँ उसको शिक्षा दी गई। जब उसके विवाह के लिये खोज शुरू हुई तो उसकी पढ़ाई भी बन्द कर दी गई। एक दिन वह अनेक वस्त्र, आभरण, और थोड़ा धन लेकर गुरु के पास गई और उसको गुरु-दक्षिणा समर्पित की। परन्तु उस पंडित ने उस दक्षिणा को छुआ तक नहीं। उसने कहा—"अगर तू गुरु-दक्षिणा देना चाहती है, तो तू शादी के बाद, पराई होने से पहिले, रात में सब गहने पहिनकर मेरे पास अकेली आ।" गुणवती मान गई और वहाँ से चली गई।

कुछ दिनों बाद उसका विवाह हो गया। विवाह के दिन की रात को ही उसने पति से गुरु-दक्षिणा की बात कही। पति ने कहा—"अच्छा, तो जाकर आ।"

गुणवती जब सब गहने पहिनकर गुरु के पास जा रही थी तो रास्ते में उसको एक चोर मिला। उसने सारे गहने उतारकर देने को कहा। नहीं तो उसको मारने की धमकी दी। गुणवती ने चोर से भी अपनी गुरु-दक्षिणा

के बारे में बताया, और कहा कि वापिस आते समय उसको अपने गहने दे देगी।

चोर मान गया।

गुणवती गुरु के घर पहुँची। गुरु को शिष्या को अपना वचन पूरा करता देख बड़ा सन्तोष हुआ। उसने कहा—"बेटी! तूने मेरी शिक्षा को सार्थक कर दिया। बिना यह जाने कि क्या खतरा आनेवाला है, तूने अपना वचन निभाया। यही तेरी गुरु-दक्षिणा है। तू वापिस जाकर अपने पति के साथ गार्हस्थ्य धर्म निभा।"—उसने हृदयपूर्वक उसको आशीर्वाद दिया।

गुणवती ने गुरु को नमस्कार कर, वापिस जाते समय चोर को प्रतीक्षा करते हुए देख कर कहा—

"यह लो भाई। अब तुम मेरे गहने ले सकते हो।"

उस बात से चोर का दिल बदल गया। वह गुणवती के पैरों पर पड़ गया। "माँ! मुझे क्षमा करो। जिस संसार में तुम जैसे व्यक्ति हैं, वहाँ मैं चोरी कर जिन्दगी बसर नहीं कर सकता हूँ।"—यह कह वह अन्धेरे में कहीं चला गया।

गुणवती ने पति के पास जा सब कह सुनाया। पति बड़ा सन्तुष्ट हुआ। वे दोनों खुशी-खुशी अपना घर-बार चलाते रहे।"

बुढ़िया की सुनाई हुई कहानी सुन व्यापारी के तीनों लड़के बड़े खुश हुये।

"इस कहानी में सब के सब उदार हैं। पर इनमें सबसे अधिक उदार कौन है? एक ही सन्देह मुझे सताता रहता है। बेटे! क्या मेरा सन्देह मिटा सकोगे?"—बुढ़िया ने पूछा।

बड़े भाई ने थोड़ी देर तक सोचकर कहा—"विवाह की ही रात को अपनी पत्नी को गुरु के पास भेजनेवाला पति ही सब से अधिक उदार है।"

दूसरे भाई ने कहा—"उससे बढ़कर गुरु की उदारता है!"

तीसरे भाई ने कहा—"हाथ में फँसी हुई राजकुमारी के गहने न लेकर, उसको छोड़ देनेवाले चोर की उदारता सबसे बड़ी है।"

"पति के कोप का, गुरु के अपमान, चोर की धमकी—इन सब को बर्दाश्त करनेवाली गुणवती की उदारता तुममें से किसी को पसन्द नहीं आई?" कहती हुई बुढ़िया हँसी।

उसी दिन राजाके पास जाकर बुढ़िया ने कहा—"महाराज, मेरे घर में रहनेवाले तीनों भाइयों में से निस्सन्देह तीसरा भाई चोर है। आप पूछताछ कर लीजिये।"

राजा ने पूछा कि उसने यह कैसे अनुमान किया। बुढ़िया ने सब कुछ बताकर कहा—"अगर वह लड़का पैसे का लालची न होता तो चोर की उदारता की प्रशंसा कभी न करता।

राजा भी जान गया कि बुढ़िया जो कह रही थी, वह सच ही था। उसकी बुद्धिमत्ता पर राजा को अचरज हुआ।

अगले दिन उसने तीनों भाइयों को बुलवाया।

"तिजोरी में रखे दो रत्नों को दोनों बड़े भाई ले सकते हैं। यही मेरा फ़ैसला है।" —राजा ने कहा।

तीसरा भाई दोनों बड़े भाइयों का मुँह न देख सका। उसने सिर नीचा कर लिया। राजा के फ़ैसले का उसने विरोध भी न किया।

बाद में तीनों भाई घर चले गये। पिता की दूसरी सम्पत्ति को भी उन्होंने आपस में बराबर बराबर बाँट लिया।

उन्होंने कभी आपस में यह न कहा कि किसने रत्न चुराया था। सब के सब मिल-जुलकर सुखपूर्वक रहने लगे।

गालियाँ

एक बैल, भैंसा और गधा, किसी चरागाह में मिले, और आपस में गप्पें मारने लगे।

"मैं ताकतवर जानवर हूँ। मेरे कारण ही मनुष्य खेती कर अनाज पाते हैं। मुझे किसान बहुत चाव से देखते हैं। अगर मैं न रहूँ तो संसार ही न रहे। परन्तु बेअक्ल लोग मेरा नाम गाली के रूप में उपयोग करते हैं। जब कोई किसी दूसरे को मेरे नाम से गाली देता है, तो मेरा पारा चढ़ जाता है।"—बैल ने कहा।

"तब मेरे तो कहने ही क्या! कोई ऐसा काम नहीं, जो मैं नहीं करता। स्वभाव का साधु हूँ। मेरे कारण किसी को कोई झंझट नहीं, दिक्कत नहीं। मैं ग़रीब किसान के लिये तो ख़ज़ाना ही हूँ। मेरे मरने पर भी वे मेरी खाल को पैरों में पहिने फिरते हैं। मैं किसी का भी बुरा नहीं करता। फिर भी जब लोग मेरे नाम से गाली देते हैं, तो आप ही बताइये, मेरी हालत क्या होगी।"—भैंसे ने कहा।

"सहन शक्ति के लिये तो मेरा नाम लेना चाहिये। भारी से भारी बोझ को ढोता हूँ। परन्तु मैं मालिक के लिये कोई भार नहीं हूँ। गाँव भर घूमता हूँ। जहाँ कुछ खाने को मिलता है, वहीं खा लेता हूँ। बारिश होती है, तो जहाँ कहीं जगह मिलती है, जा खड़ा होता हूँ। मेरी वजह से मेरे मालिक को कोई भी कष्ट नहीं होता। फिर भी मेरे नाम को ये मनुष्य बड़े बुरे ढंग से बरतते हैं। मैं किसके पास जाकर अपना दुखड़ा रोऊँ!"—गधे ने कहा।

"हमें अब इस अन्याय को बर्दाश्त नहीं करना चाहिये। हमें कुछ न कुछ करना ही चाहिये।"—भैंसे ने कहा। बैल

हरिनारायण सिंगल

और गधे ने स्वीकृति में अपने सिर हिलाये।

"हमें ब्रह्मा से कहकर इस अन्याय को बन्द करवाना चाहिये।"—भैंसे ने सलाह दी।

तीनों मिलकर ब्रह्मा के पास गये।

"कहो, इस तरफ़ कैसे आना हुआ?"—ब्रह्मा ने पूछा।

"ब्रह्मदेव! हम पर मनुष्य बहुत अन्याय कर रहे हैं। हमें स्वयं अपनी प्रशंसा तो नहीं करनी चाहिये; पर वैसे हम कोई ऐरे-गैरे नत्थू-खैरे नहीं हैं। शिव जी का वाहन नन्दीश्वर मेरे वंश का ही है। यम का वाहन भैंसा है। गधे के बारे में तो अलग कहने की ज़रूरत ही नहीं। विष्णु के अवतार श्री कृष्ण के पिता वसुदेव ने भी गधे के पाँव पकड़े थे।"—बैल ने कहा।

"तुम्हारे पूर्वज तो ज़रूर बड़े हैं। क्या मैं यह नहीं जानता? पर मुझे यह नहीं मालूम हुआ कि तुम पर मनुष्य क्या अन्याय कर रहे हैं?"—ब्रह्मदेव ने पूछा।

"हमारे पवित्र नामों को वे गाली के रूप में उपयोग कर रहे हैं। आपको चाहिये कि मनुष्यों से कहें कि वे हमारा समुचित आदर किया करें!"—तीनों ने कहा।

ब्रह्मदेव ने मुस्कराते हुये कहा—"यह तो मनुष्यों की गल्ती नहीं है। तुम्हारी बेअक़्ली के कारण ही उनका तुम लोगों के प्रति आदर चला गया है। तुम ही अपने को बदलो!"

तीनों जानवर घर की ओर चले।

"इस 'भैंसे' को मनुष्यों से पक्षपात है।"—गधे ने कहा।

"जो हमने कहा, वह तो सुना नहीं, और कुछ का कुछ कह दिया, 'बैल' कहीं का!"—भैंसे ने कहा।

"उस 'गधे' के पास जाकर शिकायत करना ही गल्ती थी।"—बैल ने कहा।

सदाचारी सामन्त

पहिले कभी सर्वजित नाम का राजा अयोध्या का परिपालन किया करता था। सर्वजित को जवानी में ही भोगविलास से विरक्ति हो गई। वह अपने बड़े लड़के को राज्य सौंप स्वयं जङ्गल में तपस्या करने के लिये चला गया।

दो वर्ष बीत गये। एक बार जब सर्वजित बहुत दूर जाकर आश्रम वापिस आ रहा था, तो एक बड़ा तूफ़ान आया। दिन में ही जङ्गल में अंधेरा छा गया। उस अंधेरे में वह रास्ता भूल गया और इधर-उधर भटकने लगा। एक झोंपड़े के पास पहुँचकर उसके किवाड़ खटखटाये।

उस झोंपड़े में सुनन्त नाम का कोई व्यक्ति अपनी पत्नी के साथ रह रहा था। सुनन्त ने किवाड़ खोलकर सर्वजित को अन्दर निमन्त्रित किया। अतिथि को पहिनने के लिये सूखे कपड़े दिये। सर्वजित ने कहा—"मुझे बड़े ज़ोर से भूख लग रही है। सवेरे से कुछ खाया नहीं है। कम से कम थोड़ी सी मांड ही पिलाइये।"

"जल्दी ही खाना तैयार कर देती हूँ। आप ज़रा आराम कीजिये"—कह सुनन्त की पत्नी ने उसके कान में कुछ कहा। सुनन्त बगलवाले कमरे में गया। सर्वजित को थोड़ी देर बाद सुनाई दिया कि वह लकड़ियाँ तोड़ रहा था। फिर थोड़ी देर बाद, सुनन्त को रसोई घर में लकड़ियाँ ले जाते हुये देखा। वहाँ उसकी पत्नी ने चूल्हा जलाकर खाना पकाना शुरू कर दिया था।

चूल्हे के जलते ही सर्वजित को चन्दन की लकड़ी के जलने की सुगन्ध आने लगी। हाथ सेंकने के बहाने वह चूल्हे के पास गया। सुनन्त की पत्नी चन्दन की लकड़ियों पर खाना तैयार कर रही थी।

सम्पतमल सुराणा

"कभी इन लोगों ने ज़रूर अच्छे दिन देखे हैं। इसी कारण चन्दन की लकड़ी की बनी चीज़ें अब भी हैं। मगर यहाँ ऐसी स्थिति में, जब उनके पास जलाने के लिये ईन्धन भी नहीं है, तो ये क्यों रह रहे हैं?"—यह सोचकर सर्वजित आश्चर्य करने लगा।

थोड़ी देर में सुमन्त की पत्नी ने भोजन तैयार कर अतिथि और पति को परोसा।

"बेटा, तुम और तुम्हारी पत्नी, लगता है, किसी अच्छे खानदान में पैदा हुये हो। तुम्हारे जङ्गल में रहने का क्या कारण है?" सर्वजित ने पूछा।

सुमन्त के मुख से आह निकली। वह कहने लगा—"स्वामी! संपत्ति शाश्वत नहीं होती। कुछ दिनों पहिले मैं एक सामन्त था। मेरे शत्रुओं ने राजा की खुशामद कर मुझे अपने ओहदे से हटवा दिया है। पर मेरा बिगड़ा ही क्या है? मेरी पत्नी ही मेरे लिये कामधेनु की तरह है। जङ्गल में हमें खाने-पीने के लिये कुछ न कुछ मिल ही जाता है। यहाँ रहते हुये भी देश के लिये अपने प्राण अर्पित कर सकता हूँ। मैं हमेशा के लिये सामन्त हूँ।"

"राजा के पास जाकर तुम क्यों नहीं फैसला करवा लेते?" सर्वजित ने पूछा।

"न्याय और अन्याय को जाननेवाले राजा ने तो अब वानप्रस्थ ले लिया है। उनके साथ ही इस राज्य का न्याय भी चला गया है।" सुमन्त ने बताया।

सर्वजित ने रात वहीं काटी और सवेरे उनसे बिदा लेकर वह चला गया।

कुछ समय बीत गया।

राज्य भर में ढिंढोरा पिटवाया गया कि सब सामन्त तुरंत अयोध्या पहुँचें। दूर दूर से सामन्त अयोध्या पहुँचने लगे। कोई पालकी

में आया; कोई हाथी पर, और कोई घोड़े पर। पर इन सामन्तों में एक सामन्त को देखकर हँसी आती थी। उसके कपड़े चीथड़े हो गये थे। हाथ में एक जंग लगी पुरानी तल्वार थी। वह पैदल ही अयोध्या चला आया था। वह भी सामन्त था।

राज-सेवकों ने सुमन्त को ढूँढ-ढाँढकर उससे कहा—"महाराज ने आपको बुलाया है।"

भरे दरबार में, सर्वजित को राजसिंहासन पर बैठा देख वह आश्चर्य में पड़ गया। परन्तु वह यह न जान पाया कि वह वही व्यक्ति था, जो उसके झोंपड़े में आया था।

"जब सब सामन्त अपने पद के उपयुक्त पोशाक में शान के साथ आये हैं, तो तुम्हारे इस वेष में आने का क्या कारण है?"—सर्वजित ने पूछा।

"क्षमा कीजिये महाप्रभू! मैं सामन्त तो हूँ, पर संपन्न नहीं हूँ। मैं देश की सेवा करने के लिये आया हूँ, न कि अपने ओहदे का आडम्बर दिखाने।"—सुमन्त ने कहा।

सर्वजित यह जवाब सुन राजा बहुत सन्तुष्ट हुआ। झट उसने सुमन्त के साथ जो अन्याय हुआ था, ठीक किया, और उसको कई नई जागीरें भी दीं।

"उस दिन जब मैंने झोंपड़े में तुम्हारा हाल सुना, तो मुझे लगा कि मैंने अपने कर्तव्य को छोड़ दिया है। तुरंत वापिस आकर मैंने अपने बड़े लड़के को सिंहासन से हटा दिया। अब मैं अपने दूसरे लड़के का पट्टाभिषेक कराना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम ही स्वयं उसको आवश्यक प्रशिक्षा दो।"—सर्वजित ने सुमन्त से निवेदन किया।

सुमन्त अपनी पत्नी के साथ अयोध्या में रहने लगा और सर्वजित के दूसरे लड़के को राजा के कर्तव्यों के बारे में शिक्षा देने लगा।

दूसरे चन्दामामा

आकाश में दीखने वाला चन्दामामा भूमि का उपग्रह है— यानी ऐसा ग्रह, जो भूमि की चारों ओर घूमता हो। चन्द्रमा भूमि का एक ही उपग्रह है। परन्तु दूसरे ग्रहों के लिये अनेक चन्दामामा हैं।

गुरु के ११ चन्दामामा हैं। उनमें से एक तो बहुत ही छोटा है। गुरु के समीप होने के कारण वह रोज़ उसकी चारों ओर घूम जाता है। उससे थोड़ी दूर पर चार और चन्दामामा हैं। ये चारों भी हमारे चन्दामामा से बड़े हैं। वे भी गुरु की चारों ओर बड़ी तेज़ी से घूमते हैं। उनमें सब से धीमे चलनेवाला चन्दामामा गुरु की चारों ओर घूमने के लिये १७ दिन लेता है। छः चन्दामामा गुरु से बहुत दूर हैं। उनको गुरु की चारों ओर घूमने के लिये बहुत समय लगता है। धीमे चलनेवाले चन्दामामा के लिये दो ७४५ दिन लग जाते हैं।

शनि ग्रह के ९ चन्दामामा हैं। (कहते हैं कि दसवाँ भी है, पर अभी उसको निश्चित नहीं जाना गया है।) शनि की चारों ओर घूमनेवाले चन्दामामाओं में टैटन सब से बड़ा है। यह हमारे चन्दामामा से भी बड़ा है। शनि की चारों ओर प्रदक्षिणा करनेवाले एक और उपग्रह का नाम है जूपिटर।

शनि ग्रह की चारों ओर घूमनेवाले चन्दामामाओं के तीन घेरे हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि इन चारों में करोड़ों से अधिक चन्दामामा हैं।

युरेनस ग्रह की चारों ओर कम से कम पाँच चन्दामामा प्रदक्षिणा करते हैं। इनको उसकी चारों ओर घूमने के लिये कई दिनों का समय लगता है।

नेप्ट्यून की चारों ओर दो चन्दामामा घूमते हैं।

भूमि से दूर ग्रहों की चारों ओर घूमनेवाले चन्दामामाओं का देखना बहुत मुश्किल है। क्योंकि गुरु भूमि से ४० करोड़ मील फ़ासले पर है। शनि, ४० करोड़ मील दूरी पर, युरेनिस १७० करोड़ मील दूरी पर, और नेप्ट्यून २७० करोड़ मील दूरी पर है।

रंगीन चित्र - कथा : चित्र - ४

अप्सरा ने अपनी अंगूठी रानी की मदद के लिये दी थी न! उसको अंगूठी के उपयोग करने का तरीका भी बताया था। जब जब कोई ज़रूरत होती, रानी अंगूठी को आँखों पर लगा मन्त्र पढ़ती, और किसी पत्थर को छू देती, तो वह सोने का सिक्का हो जाता। उससे रानी अपने खाने, पीने, रहने वगैरह के लिये खर्च निकाल लेती, और इस तरह वह घूमती जाती।

जाते जाते वह एक गाँव पहुँची। उस गाँव में, एक झोंपड़ी में एक बुढ़िया बैठी हुई थी। रानी ने उसके पास जाकर पूछा—"नानी, नानी! अमल्तास के जङ्गल में, सुना है, एक लाल किला है। क्या तुम उसका रास्ता बता सकोगी?"

तब बुढ़िया ने कहा—"बेटी! मैंने लाल किले के बारे में सुना ज़रूर है; परन्तु वहाँ कभी गई नहीं। परन्तु पंखोंवाला घोड़ा कभी कभी आकाश से नीचे उतरकर उस तरफ़ जाता है। वहाँ से मोती-मूँगे उठाकर लाता रहता है। वह घोड़ा आते-जाते वक्त बगीचे में उस बढ़ के पेड़ के नीचे ही बसेरा करता है। अगर तुम ठहर सकती हो, तो उसकी इन्तज़ार करो। जब वह आये तो तुम भी उसके साथ चले जाना।"

"अरे, नानी! तुम यह क्या कह रही हो। मैं इसी काम पर तो आई हूँ। ज़रूर ठहरूँगी।" यह कह रात-दिन गिनते गिनते पंखोंवाले घोड़े की प्रतीक्षा में, वहीं बगीचे में समय काटने लगी।

कई दिन बाद, आधी रात के समय, यकायक बिजली-सी चमकी। उसके बाद, पंखोंवाला घोड़ा नीचे उतरता-सा लगा। देखते देखते, वह घोड़ा बुढ़िया की बताई हुई जगह पर गया।

रानी ने उस घोड़े के पास जा अपना दुःखड़ा रोया। वह उससे निवेदन करने लगी—"हे अश्वराज! आपकी महिमा और परोपकारी प्रवृत्ति के बारे में मैंने बहुत सुना है। मेहरबानी होगी, अगर आप मुझे लाल किले तक पहुँचा सकें।" तब पंखोंवाले घोड़े ने मनुष्यों की भाषा में........

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

मई १९५५ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर भेजनी चाहिये।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

मार्च - प्रतियोगिता - फल

मार्च के फोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषिका को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फोटो : **गुज़र गया हमारा ज़माना!** दूसरा फोटो : **बचपन है कितना सुहावना!**

शीला हर्डीकर, द्वारा : श्री. श्री. बा. हर्डीकर, हरबंश मुहाल, कानपुर (उ. प्र.)

समाचार वगैरह

पिछले दिनों युगोस्लाविया के राष्ट्रपति मार्शल टिटो ने भारतीय सरकार के निमन्त्रण पर हमारे देश का पर्यटन किया। यह पहिला ही अवसर है, जब कि एक विदेश के उच्चतम अधिकारी, भारत की आज़ादी के बाद यहाँ आये।

युगोस्लाविया की वैदेशिक-नीति एवं भारत की वैदेशिक-नीति में बहुत साम्य है। दोनों देश के नायक शान्ति-स्थापना के लिये प्रयत्नशील हैं। दोनों का यह विश्वास है कि संसार के पूंजीवादी देश और साम्यवादी देश परस्पर मैत्री भाव के साथ रह सकते हैं। इस सम्बन्ध में, श्री नेहरू और श्री टिटो ने एक संयुक्त घोषणा भी की, जो अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में बहुत महत्वपूर्ण है।

* * *

श्री गोविन्द वल्लभपन्त, जो पहिले उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री थे, अब केन्द्रीय मन्त्रि-मण्डल में ले लिये गये हैं। श्री नेहरू इनसे यह जिम्मेवारी स्वीकृत करने के लिये कई दिनों से प्रेरित कर रहे थे।

श्री पन्त ही शायद ऐसे नेता हैं, जो वर्षों से लगातार उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री बने रहे, जब कि और प्रदेशों में, राजनैतिक उथल-पुथल के कारण, कई इस पद पर आये और चले गये। अब

उनकी जगह पर श्री सम्पूर्णानन्द उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री निर्वाचित कर लिये गये हैं।

* * *

काँग्रेस का साठवाँ अधिवेशन मद्रास के आवड़ी में, बड़े धूमधाम से संपन्न हुआ। इस अधिवेशन के सौराष्ट्र के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री. धेबर अध्यक्ष थे।

तमिल्नाड़ में यह काँग्रेस का दूसरा अधिवेशन था। और सम्भवतः यह पहिला ही अवसर था, जब कि एक महिला को स्वागत कारिणी समिति का अध्यक्ष होने का गौरव मिला। इन महिला का नाम श्रीमती अम्बुजाम्माल है। इनके पिता श्री. श्रीनिवास अय्यङ्गार कभी काँग्रेस के अध्यक्ष थे।

श्री. धेबर गान्धीवादी हैं। वे काँग्रेस को फिर से निर्माणात्मक कार्य में संलग्न करने के लिये तत्पर हैं।

पंचवर्षीय प्रणालियों के प्रचार के लिये सरकार और कई योजनाओं को कार्यान्वित करने जा रही है, जिसके अनुसार, भारत के मुख्य-मुख्य शहरों में छोटे-छोटे पुस्तकालय खोले जायेंगे, जहाँ पचवर्षीय प्रणालिका के बारे में पूरी सामग्री प्राप्त हो सकेगी। गाँवों में रेडियो की सुविधा भी दी जायगी। नई नई पुस्तिकायें, इस संबन्ध में प्रकाशित की जायेंगी।

* * *

प्राप्त समाचारों से ज्ञात होता है कि गोवा के गाँवों में गाँधी-टोपी पहिनना अपराध है। अब भी वहाँ पोर्चुगीस मनमानी कर रहे हैं।

सत्याग्रह ज़ारी है। कोई समझौते के लक्षण भी अभी तक नहीं दिखाई देते हैं। गोवा ही भारत का एक ऐसा प्रदेश है, जहाँ विदेशी अब भी धरना दिये बैठे हैं।

चित्र - कथा

जन्म-गाँठ के दिन वास को एक केमरा उपहार में मिला था। उसने उससे अच्छी फोटो लेने का निश्चय किया। साथ दास और टइगर भी आये। सब मिलकर शहर से बाहर एक आम के बगीचे में गये। वहाँ आमों से लदी एक टहनी पर एक पक्षी का घोंसला दिखाई दिया। वास ने पक्षी और उसके बच्चों की फोटो लेनी चाही।

वास केमरा हाथ में ले पेड़ पर चढ़ने लगा। परन्तु घोंसले में बैठी मादा पक्षी ने झट उड़कर उसका केमरा खरोंचने लगी। उसी समय बागवाला भी वहाँ आया। उसको देखते ही वास और दास दोनों वहाँ से चम्पत हो गये।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by P. K. Patel

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

बचपन है कितना सुहावना !

प्रेषक
शीला हर्डीकर, कानपुर

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र – ४